डाक पंजीयन क्र. : म.प्र./भोपाल/367/2018-20
आर.एन.आई. क्र. : 56428/92
प्रेषण : प्रतिमाह दिनांक 7-8

प्रकाशन दिनांक 05 सितम्बर, 2019
पृष्ठ संख्या : 40
मूल्य : 25/-

तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश की मुखपत्रिका

तुलसी मानस भारती

सितम्बर 2019
भाद्रपद-आश्विन 1941
विक्रम संवत् 2076

वर्ष 30 अंक 12
(मानस समाचार/मानस भारती सहित)
वर्ष 46 अंक 09

पंचायत एवं समाज सेवा संचालनालय मध्यप्रदेश द्वारा समस्त पंचायतों एवं प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों के लिए, शिक्षा विभाग द्वारा समस्त महाविद्यालयों, उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों/हाई स्कूलों, शिक्षा महाविद्यालयों, बुनियादी प्रशिक्षण संस्थाओं, राज्य स्तरीय संस्थाओं तथा केन्द्रीय एवं जिला पुस्तकालयों के लिए, स्थानीय शासन विभाग द्वारा नगर निगमों एवं नगर पालिकाओं के लिए तथा आदिमजाति कल्याण विभाग द्वारा आदिवासी शालाओं के लिए स्वीकृत। उ.प्र. शासन द्वारा जिला पुस्तकालयों एवं वाचनालयों के लिए अनुमोदित।

तुलसी मानस भारती

तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश की मासिक मुखपत्रिका

अनुक्रमणिका

संस्थापक संपादक
पं. गौरीलाल शुक्ल

परामर्श
डॉ. रमेश चंद्र शाह
प्रभुदयाल मिश्र

प्रधान संपादक
एन.एल. खंडेलवाल

सहायक संपादक
देवेन्द्र कुमार रावत

सम्पादकीय		
कृष्ण की बाल लीलाएँ!	एन.एल. खंडेलवाल	03
लेख		
स्मृति शेष स्वामी सत्यमित्रानंद गिरि	प्रो. बालकृष्ण कुमावत	06
हरि व्यापक सर्वत्र समाना	प्रो. शकुंतला कालरा	09
जस कौसला मोर भल ताका	शांतिविलास शर्मा	17
कविता		
दोहा-दरबार	भानुदत्त त्रिपाठी 'मधुरेश'	20
लेख		
जीवन, मृत्यु और पुनर्जन्म	रामशरण तिवारी	21
अभिवादन से दीर्घजीवी होने का रहस्य	डॉ. नरेन्द्र कुमार मेहता	25
मानव जीवन का प्रयोजन	आई.डी. खत्री	27
कविता		
प्राणदीप/रोम रोम में राम	पं. गिरिमोहन गुरू	29
प्रसंगवश		
संत हृदय नवनीत समाना	पं. नवीन आचार्य	30
समीक्षा		
सूर्या का स्वागत	आई.डी. खत्री	32
प्रतिष्ठान समाचार		34

ग्राहक शुल्क : वार्षिक रु. 250.00, पंचवर्षीय रु.1100.00, आजीवन रु. 2500.00 इस अंक का रु. 25.00

विदेश में : फिजी आयरलैण्ड, मॉरीशस व अन्यत्र समुद्री डाक से (भारतीय रुपये में) वार्षिक रु. 1250.00, पंचवर्षीय रु. 5000.00 आजीवन रु. 12500.00, हवाई डाक से वार्षिक रु. 1500.00 पंचवर्षीय रु. 6000.00 आजीवन रु. 15000.00

सम्पर्क : तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश, मानस भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल-462002, दूरभाष : 0755-2661196, 2660010

tulsimanasbharati@gmail.com www.manasbhawanbhopal.com

संपादकीय

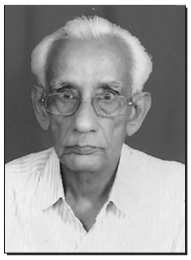

"dk hdkc &yh ykj y,

मृत्यु से खेलती और उसे पछाड़ती शक्ति का नाम कृष्ण है। कृष्ण इस खेल को बचपन से ही खेलते रहे थे। कृष्ण के लिए यह खेल सामान्य था। मृत्यु के साथ उनके इस खेल को भगवद् गीता के शब्दों में कहें तो कह सकते हैं–

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्
धर्म संस्थापनाय संभवामि युगे युगे।

दुष्टों का विनाश और धर्म की स्थापना के लिए यह खेल बार–बार खेला गया।

कृष्ण जब दूध पीते बालक थे, तभी से इस खेल का श्रीगणेश हुआ। पहली शिकार बनी पूतना। मथुरा नरेश कंस की दासी थी वह। वैदिक नियमों के अनुसार स्त्री, ब्राह्मण, गाय और बालक का वध वर्जित है। पूतना कंस की नजरों में कृष्ण को मारने के लिए सर्वोत्तम हथियार थी। स्त्री होने के नाते कृष्ण के लिए अवध्या। फिर वह थी दूध पिलाने वाली माता के रूप में। लेकिन कृष्ण ने पूतना को देख सोने का ढोंग किया। बालक को सोता जान पूतना ने उसे उठा लिया। फिर विष–स्नात स्तन उसके मुँह में ठूंस दिए। कृष्ण ने बस इतना किया कि दूध पीते–पीते उसके प्राण भी चूस लिए। इस प्रकार कृष्ण के जीवन में अत्याचारी को मारने की यह पहली घटना थी।

जब कृष्ण कुछ और बड़े हुए तो पालने में उलटने–पलटने लगे। जब वे एक साल के हुए तो एक दिन अकस्मात् यशोदाजी को गोद में बालक कुछ भारी–सा लगने लगा, अतः उसे जमीन पर बिठा दिया और स्वयं कार्य में व्यस्त हो गई। उसी समय कंस का एक भृत्य, जिसका नाम तृणावर्त था, बवंडर के रूप में प्रकट हुआ और कृष्ण को ले उड़ा। माता यशोदा और ग्वालिनें यह देखकर विलाप करने लगीं। उधर कृष्ण ने ऊपर आकाश में अपना वजन इतना बढ़ा लिया कि असुर को उसे संभालना मुश्किल हो गया। अंततः वह वजन से नीचे गिरा और मर गया। उसका शरीर वृन्दावनवासियों के लिए कौतुक बन गया।

दूध को उफनता देख माता पुत्र को छोड़ दूध सँभालने को उठ खड़ी होती है इसलिए कहावत है कि दूध बड़ा या पूत। यशोदा जी भी दूध को उफनता देख उसे बचाने पूत को छोड़कर दौड़ीं। कृष्ण नाराज हुए। माता उन्हें पकड़ने का प्रयास करती रही। अंततः उन्होंने उसे पकड़ कर उलूख से बाँधने का प्रयास किया किंतु रस्सी दो अंगुल छोटी पड़ गई। उस कमी को दूर करने का प्रयास किया। घर भर की रस्सियाँ जोड़कर, फिर भी रस्सी छोटी ही रही। किसी तरह कृष्ण ऊखल से बँधे।

बँधे–बँधे कृष्ण ने सामने उगे दो अर्जुन वृक्षों को देखा और उस जोड़ी को ध्वस्त करने का विचार किया। वस्तुतः ये दोनों वृक्ष नलकुंवर और मणिग्रीव देवताओं के कोषपाल कुबेर के पुत्र थे, जो अत्यंत कामुक, दुराचारी तथा मदिरा–पान करने के आदी थे। नारद के शाप के कारण वे वृक्ष में परिवर्तित हो गये थे। वे यमलार्जुन के नाम से ज्ञात थे।

कृष्ण ने उनके उद्धार के संबंध में सोचा। विचार करने के बाद श्रीकृष्ण ने उलूख से बँधे–बँधे उन वृक्षों के बीच में निकलने का प्रयास किया। वे तो निकल गये लेकिन उलूख अटक गया। अटके उलूख को निकालने जैसे ही जोर लगाकर रस्सी खींची वैसे ही दोनों पेड़ उखड़कर घोर आवाज करते हुए गिर पड़े। इन वृक्षों से दो महापुरुष प्रकट हुए और उन्होंने कृष्ण की वंदना की। उस समय नंद सहित गोकुल के निवासी वहाँ एकत्र हुए। वे आश्चर्यचकित थे।

कृष्ण के गोकुल से वृन्दावन आने पर कृष्ण–बलराम को वृन्दावन में बछड़ों का भार सौंपा गया था। कृष्ण–बलराम दोनों ही बछड़ों के साथ खेला करते थे।

एक बार कृष्ण–बलराम यमुना तट पर खेल रहे थे तो वत्सासुर नामक असुर बछड़े का रूप धारण कर अन्य बछड़ों में घुल–मिल गया। कृष्ण ने उसे देख लिया। बलराम को उसकी सूचना दी और दोनों भाइयों ने उसका पीछा करते हुए उसे पकड़ लिया और बलपूर्वक एक वृक्ष पर फेंक दिया। पेड़ की चोटी से गिरकर असुर की मृत्यु हो गई। सारे संगी–साथियों ने उनके अद्‌भुत कौशल पर उन्हें बधाई दी।

श्री कृष्ण–बलराम बछड़ों की रक्षा का भार संभाले ही हुए थे कि एक दिन उन्होंने एक विशालकाय एक बतख जैसे पक्षी को देखा। देखते–देखते वह कृष्ण को अपनी चोंच में उठाकर निगल गया। ग्वाल–बाल व्याकुल हो उठे। निगलते समय उसके कंठ में कृष्ण के तेज के कारण तीव्र जलन होने लगी। उस समय उस पक्षी ने प्रयास किया कृष्ण को उछाल कर निगलने का। लेकिन कृष्ण ने उस विशालकाय पक्षी की चोंच पकड़ ली और उसके मुख को दो भागों में चीर दिया। ग्वाल–बालों ने आनंद मनाया। यह पक्षी और कोई नहीं कंस का मित्र वकासुर था।

कृष्ण बछड़ों के रख–रखाव की जिम्मेदारी संभाले हुए थे कि पूतना तथा वकासुर का छोटा भाई और कंस का मित्र अधासुर कृष्ण और उसके साथियों के समक्ष प्रकट हुआ। उसने भी पूतना और वकासुर की तरह कृष्ण को मार डालना चाहा। अधासुर ने "महिमा" नामक शक्ति का प्रयोग करके अपने शरीर को इतना फैला लिया कि चारों तरफ वह ही दिखाई पड़ता था। ऐसा देखकर श्रीकृष्ण सखा तो घबरा गये किंतु कृष्ण निःशंक। अंत में कृष्ण ने असुर के मुँह में घुसने का निश्चय किया।

कृष्ण को असुर के मुँह में जाता देख साथी ग्वाल–बाल तथा देवतागण तो घबरा गये किंतु कृष्ण का विरोधी कंस प्रसन्न हुआ। जब कृष्ण ने देवताओं तथा साथियों को घबराता हुआ देखा तो उन्होंने असुर के गले के बीच अपने आपको विस्तारित करना प्रांरभ किया और अपने को इतना विस्तारित कर लिया कि असुर का दम घुटने लगा। उसकी आँखों के आगे अँधेरा छा गया। प्राणवायु शरीर के भीतर ही अटक गयी। अंततः उसकी खोपड़ी में छेद करके प्राणवायु बाहर निकली और राक्षस मर गया।

ये घटनाएँ कृष्ण के बालपन की हैं जो हमें चकित करती हैं। इसके बाद उन्होंने धेनुकासुर का वध, कालिय दमन, प्रलम्बासुर का वध, दावानल–पान जैसे और भी कृत्य किये, जो साक्षात् ईश्वर के बिना और किसी के लिए संभव नहीं है। जब वृन्दावन के ग्वाल–बालों से नंद बाबा ने इसका रहस्य जानना चाहा तो उन्होंने गर्ग मुनि के संदर्भ से बताया कि "यही बालक रूप, गुण, कर्म, प्रभाव तथा यश में विष्णु के सदृश है अतः हमें इसके अद्‌भुत कार्यों से चकित नहीं होना चाहिए।"

इसके आगे तो कृष्ण का जीवन रहस्यों का पिटारा ही है जो गोपियों के साथ रासलीला, विद्याधर मोक्ष तथा शंखासुर वध, श्रीकृष्ण विवाह, वाणासुर से संग्राम, महाभारत युद्ध आदि में प्रकट हुआ और कृष्ण ने इन सबमें विजय पाई।

कृष्ण ही अकेला ऐसा अवतार था जो बाल्यकाल से लेकर अंत तक लड़ता और जीतता रहा।

(एन.एल. खंडेलवाल)

''मृत्यु से खेलती और उसे पछाड़ती शक्ति का नाम कृष्ण है। कृष्ण के लिए यह खेल सामान्य था।

''कृष्ण का जीवन रहस्यों का पिटारा ही है। कृष्ण ही अकेला ऐसा अवतार था जो बाल्यकाल से लेकर अंत तक लड़ता और जीतता रहा।''

लेख

L fe rk'k &Lkohe Jh Rl f; ek= Uun fxj

:: ki- kc ' y"dk| ke o]r

पूर्व जगद्‌गुरु शंकराचार्य, भारतमाता मन्दिर, हरिद्वार के संस्थापक स्वामी सत्यमित्रानंदजी गिरि की गणना बीसवीं सदी में भारत के धरा–धाम पर अवतरित संतों में प्रमुख रूप से की जाती है। वे भारतीय संस्कृति एवं धर्म की अमूल्य निधि एवं लाखों लोगों की श्रद्धा के केन्द्र थे। पूज्य स्वामीजी के सम्पर्क में आने वाले सभी लोगों का यह अनुभव है कि जहाँ ब्रह्मनिष्ठा और विद्वत्ता प्रतिष्ठित और प्रकाशित हो वहाँ सरलता, सहजता, करुणा, उदारता आदि समस्त सद्‌गुण स्वतः प्रवाहित होते रहते हैं। जैसे गुलाब के फूल से सहज सुगंध निकलती है और उस फूल के पास से ही कोई गुजरे तो उसे सुगन्ध प्राप्त करने के लिये अतिरिक्त प्रयास करने की आवश्यकता नहीं होती वैसे ही उस सद्‌गुण, दिव्यगुण सम्पन्न ब्रह्मनिष्ठ–विद्वान की सन्निधि, सत्संग में आते ही व्यक्ति को उस महापुरुष के गुण प्राप्त होते हैं। ऐसे ही है परम वन्दनीय स्वामी श्री सत्यमित्रानन्दजी गिरि महाराज। आधुनिक काल में और विशेषतः विगत पाँच दशकों में भारतीय राष्ट्रीय विचार–धारा और संस्कृति को समुन्नत करने एवं उसका प्रचार करने में पूज्य स्वामीजी का योगदान भुलाया नहीं जा सकता। उनकी वाणी तथा लेखनी में अद्‌भुत शक्ति थी। अतिप्रखर विद्वान होते हुए भी वे विद्याभिमान शून्य, परम विनीत एवं सरल स्वभाव के थे। जिन्हें क्षणभर के लिये भी पूज्य स्वामीजी के सम्पर्क में आने का अवसर व सौभाग्य प्राप्त हुआ वे सभी इस बात को जानते हैं कि उनके निकट आते ही उनसे आत्मीयता का अनुभव होने लगता था। ऐसे दिव्य तत्वज्ञ संत हजारों–लाखों में कोई–कोई होते हैं। भगवान् श्रीकृष्ण ने श्रीमद्‌भगवद्‌गीता के सातवें अध्याय में कहा है कि हजारों मनुष्यों में कोई एक मेरी प्राप्ति के लिये यत्न करता है और उस यत्न करने वाले योगियों में भी कोई एक मेरे परायण होकर मुझको तत्व से अर्थात् यथार्थ रूप से जानता है–

मनुष्याणां सहस्त्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्वतः।।

ऐसे तत्वज्ञानी संत का जन्म 19 सितम्बर 1932 को आगरा शहर में एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में हुआ था। शैशवावस्था से ही "होनहार विरवान के होत चीकने पात" की उक्ति चरितार्थ होने लगी। अल्पायु में विरक्ति होने से गृहत्याग

कर विभिन्न आश्रमों में संतों के सान्निध्य में रहकर विद्याध्ययन किया। हिमालय की उपत्यकाओं में बैठकर एकान्त साधना की। सत्ताईस वर्ष की आयु में सन् 1959 में बद्रिकाश्रम की उपपीठ भानपुरा (म. प्र.) में जगद्गुरु शंकराचार्य के पद पर अभिषिक्त हुए। इस गौरवपूर्ण पद पर रहकर अपने परिव्रजन के दौरान देश में अनेक गाँवों में रहने वाले और विपन्न जीवन व्यतीत करने वाले पिछड़े लोगों को, आदिवासियों– वनवासियों को निकट से देखा। उनकी दयनीय स्थिति देखकर आप विगलित हो जाते थे। सन् 1962 में दक्षिणपूर्वी अफ्रीका में रहने वाले प्रवासी भारतीय लोगों के निमंत्रण पर वहाँ पधारे। वहाँ के प्रवासी भारतीयों में पूज्य स्वामीजी को मानव– कल्याण के लिये सेवा–कार्य करने की दृष्टि से अत्यधिक सम्मान मिला। भारत लौटने पर, शंकराचार्य पद पर रहते हुए विदेश यात्रा और हरिजन–आदिवासियों से मिलना प्रशंसनीय नहीं माना गया। इससे पूज्य स्वामीजी को मानसिक वेदना हुई। उन्हें लगा– "ऐसा कैसा पद, कैसी प्रतिष्ठा जो अपने ही देश के, अपने ही अंग, विपन्न और तिरस्कृत समाज के लोगों से मिलने में बाधक बने। मैं साधु हूँ, "सर्व खल्विदं ब्रह्म" "वसुधैव कुटुम्बकम्" की बात करता हूँ और अपने मानव–परिवार से मिलने में, उनकी सेवा करने में कठिनाई? इस चिन्तन ने दस वर्ष पश्चात् एक दिन गंगाजी में दण्ड विसर्जित कराकर उन्हें उन्मुक्त परिव्राजक सन्यासी की कोटि में ला दिया। शंकराचार्य का गौरवपूर्ण पद तत्काल त्याग दिया। हरिद्वार में साधना के प्रयोजन में सप्त ऋषियों की तपोभूमि सप्त सरोवर क्षेत्र में सन् 1970 में "समन्वय कुटीर" आश्रम की स्थापना की। आज समन्वय कुटीर का क्षेत्र काफी विस्तृत हो गया है। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त एवं राष्ट्रीयता का प्रतिनिधित्व करने वाला विशाल भारतमाता मंदिर पूज्य स्वामीजी ने निर्मित कराया जिसका उद्घाटन तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्दिरागाँधी ने किया था। सप्त सरोवर मार्ग पर ही विशाल वृद्ध– साधना आश्रम निर्मित किया गया जिसका उद्घाटन पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने किया। देश के उच्चकोटि के नेता, संत, विचारक और महान् पुरुष भारतमाता मन्दिर आ चुके हैं। सभी ने इस मन्दिर की भूरि–भूरि प्रशंसा की है।

पूज्य स्वामीजी ने समन्वय सेवा ट्रस्ट के अन्तर्गत अनेक समन्वय परिवारों की स्थापना देश–विदेश में की जो जनकल्याणकारी विभिन्न सेवा प्रकल्प चला रहे हैं जैसे आदिवासी–वनवासी सेवा, निःशुल्क दवाई वितरण, वस्त्र वितरण, रोजगार के साधनों (सिलाई मशीन आदि) का वितरण, सत्साहित्य का प्रकाशन व वितरण, अकाल पीड़ित, भूकम्प पीड़ित तथा अन्य प्राकृतिक आपदा से पीड़ित लोगों की सेवा, आवास हेतु मकानों का निर्माण, शिक्षण संस्थाओं की स्थापना, गौ सेवा, संत–सम्मान, भण्डारा आदि। प्रतिवर्ष कला, संस्कृति, साहित्य, समाजसेवा, राष्ट्रसेवा आदि के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान देने वाली प्रतिभा को समन्वय पुरस्कार से अलंकृत किया जाता है। भारतीय संस्कृति, जीवन के आदर्श मूल्यों का संदेश देश–विदेश में प्रसारित करने की दृष्टि से एक मासिक पत्र "समन्वय साधना पथ" का विगत तीन दशकों से प्रकाशन हो रहा है। वर्ष में एक दो बार निःशुल्क चिकित्सा शिविर (पोलियो, नेत्ररोग, हड्डीरोग, मधुमेह आदि) हरिद्वार में विशाल स्तर पर आयोजित किया जाता है जहाँ निर्धन, असहाय एवं असमर्थ लोगों को चिकित्सकीय एवं शल्य चिकित्सा–लाभ प्रदान किया जाता है।

देश के कोने–कोने में तथा भारत के बाहर 60–70 देशों में विगत 50 वर्षों में पूज्य स्वामीजी ने अपने दिव्य प्रवचनों के माध्यम से भारतीय संस्कृति, राष्ट्रीयता, जीवन के आदर्श मूल्य, विश्व बन्धुत्व, एकता, सौहार्द, सद्भाव एवं शान्ति का संदेश

दिया। इससे विश्व में एक वैचारिक क्रान्ति के प्रसार को बल मिला। पूज्य स्वामीजी की गणना विश्व के श्रेष्ठ वक्ताओं में होती है। आपका उद्‌बोधन संयुक्त राष्ट्र संघ में भी हो चुका है। पूज्य स्वामीजी अपनी वाङ्‌मयी सेवा से प्रत्येक नर में विराजमान नारायण को प्रसन्न करते रहे हैं। आप मानवसेवा को ही माधवसेवा मानते थे। पूज्य स्वामीजी समूची मानव–जाति के संत तथा जात–पाँत, सम्प्रदाय, संकीर्णता जन्य भेदभाव से ऊपर उठे हुए थे। वे प्राणीमात्र में नारायण के दर्शन करते थे। उनके भक्तों में हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, सिख आदि सभी जाति के लोग शामिल थे। "समन्वय" उनका प्रमुख दर्शन है, साधना है और संदेश है।

पूज्य स्वामीजी उच्चकोटि के साहित्यकार, लेखक एवं कवि थे। उनके द्वारा अनेक ग्रन्थों की रचना की गई जिनमें राष्ट्रभक्ति, समन्वय, सर्व–धर्म समभाव, परमात्मा के प्रति पूर्ण समर्पण, भारतीय संस्कृति के उन्नयन, सेवा–धर्म, जन कल्याण, पिछड़े वर्ग के उत्थान, राष्ट्रीय एकता, समता आदि के दर्शन होते हैं। उनकी रचनाओं के अध्ययन में गोस्वामी तुलसीदासजी के यह पंक्ति याद आ जाती है–

जेहिं पर कृपा करहिं जनु जानी।
कवि उर अजिर नचावहिं बानी।।

जिसे भी पूज्य स्वामीजी के प्रवचनों को श्रवण करने, उनके साहित्य को पढ़ने का अवसर प्राप्त होता है उसे उनके अगाध पांडित्य, विशद ज्ञान एवं वैदुष्य का साक्षात्कार हो जाता है।

पूज्य स्वामीजी के सहज प्रेम, पारदर्शिता, बालोचित सरलता, समयबद्धता, सभी धर्मों एवं सम्प्रदायों के प्रति सहिष्णुता, अन्याय एवं अनीति के प्रति कठोरता, प्राणीमात्र के प्रति प्रेम आदि सात्विक गुणों के दर्शन से सभी भक्त अभिभूत हो जाते थे। उनकी यशःसुरभि से भारत का आध्यात्मिक जगत् महक रहा है। उनका किसी से कोई विवाद नहीं, किसी के प्रति कोई शिकायत नहीं, कोई अभिमान नहीं, कोई आक्रोश नहीं। जनता में धार्मिक और नैतिक मूल्यों का पुनः प्रतिष्ठापन तथा दुःखी एवं संतप्त लोगों की सेवा के लिये वे सदा प्रेरित करते रहे। पूज्य स्वामीजी के विचार, वाणी और सत्संग से भारतीयता की अमिट छाप मानस–पटल पर पड़ती है।

उनकी वाणी से ज्ञानामृत झरता था, उनके नेत्रों से प्रेम की सुखद ज्योति निकलती थी, उनके मस्तिष्क से जगत् का कल्याण प्रसूत होता था, उनके हृदय से आनन्द की धारा बहती थी।

तीर्थी कुर्वन्ति तीर्थानि सुकर्मी कुर्वन्ति
कर्माणि, सच्छास्त्री कुर्वन्ति शास्त्राणि।।

नारदभक्ति सूत्र

क्षुद्रहृदयता, ईर्ष्या एवं कृतज्ञता के वर्तमान युग में स्वामी सत्यमित्रानन्दजी गिरि जैसे संत की अवस्थिति एवं आविर्भाव एक वरदान था। उनके व्यक्तित्व की गरिमा, चरित्र, स्वरूप, क्रिया एवं व्यवहार, इंगित तथा स्मित को शब्दों में अंकित कर पाना सहज नहीं है।

अपनी भूमिका का निष्ठापूर्वक निर्वाहकर स्वामीजी महाराज दिनांक 25 जून, 2019 मंगलवार प्रातः 8 बजे ब्रह्मलीन हो गए। ऐसी दिव्य विभूति की क्षति अपूरणीय है। परमपिता परमेश्वर ने उन्हें अपना विशेष प्रतिनिधि बनाकर भारत के धराधाम के कल्याणार्थ भेजा था। उनका समूचा जीवन जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान के लिये समर्पित रहा जो भारत के स्वर्णिम इतिहास में अंकित रहेगा और भावी पीढ़ियाँ उससे प्रेरणा प्राप्त करती रहेंगी।

9, आजाद नगर, उज्जैन–456010

लेख

fgjO k; i d lo= keku

ki- k drk y kd jky

ईश्वर पूर्ण और घट–घट वासी हैं। अंदर–बाहर सर्वत्र विद्यमान है। जड़–चेतन सारी सृष्टि में अनुस्यूत है। सारी प्रकृति उसी से संचालित है। चाँद सूरज का नियमन वही करता है। सागर–नदियाँ उसी से तरंगित हैं। फूलों में गंध–रूप में समाया है। फलों में स्वाद बनकर बैठा है। उपनिषदों में ब्रह्म को दसों दिशाओं एवं विदिशाओं में सर्वत्र व्यापक कहा गया है। छांदोग्योपनिषद् में आत्मा की सर्वव्यापकता के विषय में कहा गया है कि वही नीचे है, वही ऊपर है, वही आगे है, वही पीछे है। वही दाहिनी ओर है वहीं बांयीं ओर। –छा.उ. 7/25/1

वृहदारण्यकोपनिषद् में भी उस ब्रह्म को पूर्ण रूप से सर्वत्र व्याप्त कहा गया है। वह पूर्ण होने पर भी उससे ऊपर है–

पूर्णमदः पूर्णमिदम् पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।

–वृह.उ.2/5/19

सभी संतों और भक्तों ने निराकार ब्रह्म की सर्वव्याकता के प्रति अपना पूर्ण विश्वास प्रकट किया है। निर्गुण–भक्त नामदेव के लिए यह परमतत्व सबमें परिव्याप्त है। सब ओर व्याप्त है। चहुँ ओर गोविंद ही गोविंद है। गोविन्द के बिना कुछ भी नहीं है–

सभु गोविन्द है, सभु गोविन्द है, गोविन्द बिनु नहीं कोई।

–आदिग्रंथ, नामदेव

दादू सभी दिशाओं में ही "पीर" को देखते हैं –

दादू देषू दयाल कूं बाहरिं भीतरि सोइ
सब दिसि देषूं पीव कूं दूसर नाहीं कोइ

–दादूदयाल, परशु. परचा कौ अंग, दोहा 72

कवि गुलाल साहिब इसकी पुष्टि करते हैं कि सब घटों में उसी की सत्ता व्याप्त है–

सब घट साहब बोल सत्त ठहरावई।

—गुलाल साहब की बानी, —66,
पृ.62, अरिल छंद 10

गुरु अमरदास का साहिब अंतर्यामी है और सब जगह बसता है—

सभु अंतर–जामी ब्रह्म है ब्रह्म बसै सब थाईं।

— गुरुग्रंथ साहिबु, राग सूही, महला 3, पृ.757

सहजोबाई भी सर्वत्र हरि की व्यापकता का वर्णन करती है—

जित देखूँ तित रमि रह्यो सबमें व्यापक है हरी।

—सहज प्रकाशः सहजो बाई,
होरी राग घनाश्री छंद 20, पृ. 119

दसों दिशाओं में "साई" के अतिरिक्त कोई नहीं है। जैसे समुद्र की हर लहर में पानी है वैसे ही सारे जगत् में परमेश्वर व्याप्त है —

सिंधु में हुं ज्यों लहरे जानो तामें सब पानी पहचानो
ऐसे नाहीं दूजा ठानो सब जग साईं साईं।

—सहज प्रकाशः सहजो बाई राग जैजैवंती,
छंद 35, पृ. 126

विष्णु की व्यापकता के कारण ही संत जंभनाथ का पंथ "विश्नोई" पथ कहलाया। गुरु नानकदेव, गुरु तेगबहादुर ने भी घट–घट में बसे हरि का स्मरण किया है। मलूकदास कहते हैं —

कुंजर चींटी पसू नर, सब में साहिब एक।

हदी संतकाव्य संग्रह, सं. गणेश द्विवेदी,
मलूकदास, पृ. 278

आद्ध राम राय घट में बसैं, ढूंढ्त फिरैं उजाड़।

—वही, पृ. 279

निरंजनी–संप्रदाय में भी परमात्मा को हर घट में व्याप्त माना है। सिक्ख गुरु समर्थ रामदास भक्त तुलसीदास की भाँति इस जगत को इष्टमय देखते हैं। सतनामी–संप्रदाय के कवि जगजीवनदास को भी जल–थल सबमें वही "जोति" समाई दीखती है—

जल थल महँ वहि जोति समोई।

—संत–सुधासार, दूसरा खंड, पृ. 79

बावरी–संप्रदाय के कवि भीखा का कहना है कि केवल वही एक है और कोई है ही नहीं—

भीखा केवल एक है, किरतिम मया अनंत।
एकै आतम सकल घट, यह गति जानहिं संत।।

—भीखा साहब की बानी, भाग–1, पृ. 53

बावरी–संप्रदाय के संत केशवदास मानते हैं कि "धरनि–अकास" में सर्वत्र वह ही है —

रह्यो सब ठाँव, तौ घरनि अकास में।।

—अमीघूँट, पृ. 3

कृष्णभक्त सूरदास ने अपने पदों में यही प्रतिपादित किया है कि पूर्ण पुरुषोत्तम परब्रह्म श्री कृष्ण का ही प्रसार संपूर्ण सृष्टि में है। सारी सृष्टि उसी का अंश है—

सकल तत्व ब्रह्माण्ड देव पुनि माया सब विधि काल।
प्रकृति पुरुष श्रीपति नारायण सब है अंश गुपाल।।

—सूरसारावली, पृ. 38

परमानंददास के सर्वान्तर्यामी उपास्य भी चहुँ ओर व्याप्त हैं —

तुम प्रभु अंतर्यामी व्यापक द्वितीय साखि कहा कीजै

—परमानंददास, पद–संग्रह, दीनदयालु गुप्त,
पद 287

महात्मा पलटू का भी विश्वास है कि वह सकल घट में विराजमान है। कोई भी कोना उससे खाली नहीं है—

साहिब आप बिराजै सकल घट,
चारि खानि विच राजै।।

—पलटू साहब की बानी, भाग 3, पृ. 3

संत कवि रैदास उस स्रष्टा को अपनी सृष्टि में सर्वत्र व्याप्त देखते हैं। हर घट में वही एक अंतर्यामी रूप में समाया हुआ है –

तुम सबहिन मंह तुम सब मांहि।
संत गुरु रविदास की वाणी,

सं. डॉ. बी.पी. शर्मा, पद 33

हर स्थान में उसका वास है–

पूरन ब्रह्म बसै सब ठांई,
कहै रविदास मिले सुख सांई।

–वही पद 53

स्थावर–जंगम कीट–पतंग सभी में एक ही तत्व समाया है –

थावर जंगम कीट–पतंगा, पूरि रह्यो हरि राई।

–वही पद 28

पंडित और योगी में, वैद्य और रोगी में सबमें वही बसता है। कबीर के अनुसार पात्र अलग हैं किंतु तत्व मूलतः एक है–

इनमैं आप सबहिन मै आप आप सूँ खेलै।
नाँनाँ भाँति घड़े सब भाँडे, रूप धरे धरि मेले।।

–क.ग्रं. श्याम, पद 186

कुम्हार ने एक ही "माटी" से पूरे जगत् की रचना की है। रचयिता स्वयं उन्हीं में रम रहा है –

माटी एक सकल संसारा
बहुविधि भाँडे घड़े कुँभारा।...
कहै कबीर संसा करि दूरि,
त्रिभुवननाथ रह्या भरपूरि।

–वही पद 53

सुंदरदास के अनुसार यह सृष्टि उस व्यापक अखंड ब्रह्म का ही प्रतिरूप है।

सुन्दर हूँ नहिं और कछु तूं कछु और न होई।
जगत कहा कछु और है एक अखंडित सोइ।

–सुन्दर–साखी–ग्रंथ, रमेशचन्द्र मिश्र, अद्वैत ज्ञान को अंग, साखी 1

नाम अलग–अलग हैं। यह सारा संसार वैसे ही ब्रह्म का रूप है जैसे एक ही बीज विभिन्न वृक्षों का आकार धारण करता है–

सुन्दर यह सब ब्रह्म है नाम धर्यौ संसार।
एक बीज मैं पलटि कै हूवौ वृक्षाकार।

–वही, वही साखी 10

वापी, कूप और हर तालाब के तल में वही समाया है–

बापी कूप तालाब मैं सुंदर जल नाहिं और।
एक अखंडित देखिए व्यापक सबही ठौर।।

–वही, साखी 7

वह ब्रह्म पूरे जगत् का आधार वैसे ही हैं जैसे सभी मणिकादि को जोड़ने वाला सूत का धागा। बिना ब्रह्म सब निराधार है–

जैसै मनिका सूत के बीचि सूत कौ तार।
ऐसैं सुन्दर ब्रह्म सब, याही है निरधार।

–वही, साखी 19

गुरु गोविंद सिंह जी के अनुसार सारा विश्व उससे उत्पन्न होता है और उसी में समा जाता है। इसलिए इसे विश्व रूप कहा गया है–

तैसे बिस्व रूप ते अभूत भूत प्रगट होई।
ताही ते उपजे सबै ताही मै समाहिंगे।।

–अकाल स्तुति, 87

वह सबमें व्याप्त है और सबका उपादान कारण है। यारी साहब ने स्वर्ण के मध्य भूषण और भूषण के मध्य स्वर्ण के द्वारा उसकी व्याप्ति को परिभाषित किया है–

गहने के गढ़े तें कहीं सोना भी जातु है।
सोनो बीच गहनो और गहनो बीच सोनो है।

–हदी संत काव्य–संग्रह,
सं. गणेश द्विवेदी, यारी साहब पृ. 307

बुल्लेशाह सभी दृश्यमान पदार्थों में उसे वैसे ही व्याप्त मानते हैं जैसे अलग–अलग गहनों में सोना–

बुल्ला चल्ल सुन्यार दे, जिन्थे गहना घड़िये लाख
सूरत आपो आपनी, तू इको रूप में आख

–संतवाणी–संग्रह, पहला भाग, पृ. 152

भीखा साहब भी यही फरमाते हैं। उनकी दृष्टि में समंद, दरिया, जल–कूप, लहर, बूँद सभी में एक ही पानी विद्यमान है–

जहाँ तक समुंद दरियाव जलकूप है,
लहरि अरु बुंद को एक पानी।
एक सुबर्न को भयो गहना बहुत,
देखु बीचार यह हेम खानी।

–हदी संतकाव्य–संग्रह, सं. गणेश द्विवेदी, भीखासाहबद्ध पृ. 250

उसकी व्यापकता अंतर्बाह्य दोनों रूपों में है। गुरु तेगबहादुर के अनुसार पुष्प में सुवास और मुकुर में छाया की भाँति हरि हर–घट में विद्यमान है–

पुहुप मधि जिउ बासु बसत है मुकुर माहि जैसे छाई।
तैसे ही हरि बसे निरंतरि घट ही खोजहु भाई

–गुरुग्रंथ साहब, रागु घनासरी, महला 9, पृ. 684

बाहर भीतर सर्वत्र एक ही तत्व है–

बाहरि भीतरि एको जानहु इहु गुरि गिआनु बताइ।

–वही, राग घनासरी, महला 9, पृ. 684

बात केवल उसे पहचानने की है। फिर तो वह सर्वत्र दिखाई देता है। सगुण भक्त तुलसी की भांति संत सिंगा को हर नारी में वही दिखाई देता है –

नर–नारी में देखि ले, सब घट में एक तार
कहै सिंगा पहचान ले एक ब्रह्म है सार।

संत काव्य, सं. परशुराम चतुर्वेदी पृष्ठ 268, पद 1

संत बुल्ला साहब भी सकल घट में छाये उस परमतत्व की तीनों लोकों में "गम्म" मानते हैं–

तीन लोक में गम्म जाके, द्वार सेवा लाय।।

–बुल्ला साहब का शब्द सार. पृ.3

दयाबाई के अनुसार वह जड़–चेतन, कीट–पतंग में माला में सूत्रवत् विद्यमान है–

वही एक व्यापक सकल ज्यों मनिका में डोर
थिर चर कीट पतंग में दया न दूजो ओर।

–दयाबाई, संतवाणी–संग्रह, भाग 1, पृ. 178

सूफीकाव्य में भी ईश्वर को तीनों कालों में सर्वव्यापक कहा गया है–

हुत पहिले अरु अब है सोई।
पुनि सो रहै रहै नहिं कोई।

–जा.ग्रं. शुक्ल, पदमावत, स्तुति खंड, दोहा 7, चौ 3

वह ज्योति–रूप में सर्वत्र प्रकट हो रहा है "एक जोत परगट सब ठाऊँ" कहकर कवि उसमान उसका परिचय देते हैं। जायसी भी सर्वत्र उसी की ज्योति का प्रसार पाते हैं–

ओहि जोत परछाहीं, नवौ खंड उजियार।
सुरुज चाँद कै जोती, उदित अहै संसार।

–वही, अखरावट, दोहा 49

सूफी कवि मंझन के अनुसार ऐसा कोई स्थान नहीं जहाँ वह न हो –

नहिं अस ठांव जहाँ वो नांहि,
पूर रहा चौदा गढ़ माहीं

–कासिम शाह, हंसजवाहिर, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, सन् 1937 पृ.3

हंसजवाहिर के माध्यम से सूफी कवि कासिमशाह ने रहस्यवाद की सृष्टि की है। जगत् के कण–कण में प्रतिभासित होने वाला ब्रह्म ही उनकी कथा में "जवाहिर" नाम से अभिहित है। उसी का प्रकाश–पुंज समस्त जगत् को आलोकित

कर रहा है–

नगर सलोन ठान व्यहि केरा,
चहुँ दिशि जगमांह उजियेरा

कासिम शाह, हंसजवाहिर, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, सन् 1937, पृ.5

शेख रहीम भी उसी एक ज्योति का उजियारा सारी सृष्टि में देखते हैं।

एकै जोत जगत उजियारा, एकै रूप मोह संसारा।

–प्रेमरसः शेखरहीम

शेख निसार मानते हैं कि ब्रह्म सर्वव्यापक है–

अलख अमर अविनासी, घट–घट व्यापक होय

–युसुफजुलेखा, आदिखंड, पृ. 328

घट–घट वासी परमात्मा ही समस्त जगत का निर्माता तथा नियन्ता है।

–युसुफजुलेखा, आदिखंड, पृ. 328–329

उसमान के अनुसार सर्वत्र वही रम रहा है–

सोइ करता रमि रहा, रोम–रोम सब माँहि।

–चित्रावली, उसमान, पृ.2

वह सबके भीतर भी है और बाहर भी। सब कुछ वही है दूसरा कुछ भी नहीं –

सब वाहि भीतर वह सब माही।
सबै आपु दूसर कोउ नांहि।

–चित्रावली, उसमान, पृ.1

पद्मावत में उल्लेख है कि चौदह भुवनों के सभी मनुष्यों के घट–घट में उसका वास है–

चौदह भुवन जो तर उपराहीं।
ते सब मानुष के घट माहीं।

–जा.ग्रं. शुक्ल, पद्मावत, उपसंहार दोहा 1, चौ.1 पृ.1. 245

पूरी सृष्टि उन्हें ब्रह्ममयी दिखाई देती है। अतः जायसी उसे सिर नवाते हैं–

भए आपु औ कहा गोसाई।
सिर नावहु सगरिउ दुनियाई।

–वही, अखरावट, दोहा 4, की चौ.2

जैसे कबीर की दृष्टि में तत्व एक है। अलग–अलग रूप आकार के पात्रों में मिट्टी एक है, वैसे ही जायसी भी स्वीकार करते हैं कि सभी पात्र एक ही "चाक" पर चढ़ाकर बने हैं–

एक चाक सब पिंडा चढ़ै।
भांति–भांति के भाँड़ा गढ़े।

वही अखरावट, दोहा 5 की चौ 1

सच तो यह है कि जहाँ तक दृष्टि जाती है अथवा जितना भी दृश्यमान जगत् है सब उसी की कृति है। जायसी के अनुसार इसे कोई धर्मी ही पहचानता है, पापी नहीं–

परगट गुपुत सो सरब बिआपी।
धरमी चीन्ह न चीन्है पापी।

–जा.ग्रं. शुक्ल, पद्मावत स्तुति–खंड, दोहा 7 की चौ.1

सूफीकाव्य के उपर्युक्त अध्ययन से यह स्पष्ट है कि उनका "अल्लाह" सर्वत्र व्याप्त है। पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, सर्वत्र उसका निवास है। बाहर–अंदर उसी की छटा बिखरी है। सर्वत्र उसी का नूर है किंतु उसे समझ वही सकता है जो उसके स्वरूप को पहचानता है–

जो बाहर सो अंत समाना।
सो जानै जो औहि पहचाना।

वही, अखरावट, दोहा 46 की चौ.2

रामकाव्य में राम की सर्वव्याकता को तुलसी दास ने वाल्मीकि के मुख से बड़े सुंदर ढंग से सिद्ध किया है–

पूँछेहु मोहि हि रहौं कहँ, मैं पूँछत सकुचाउँ।
जहँ न होहु तहँ देहु कहि तुम्हहि देखावौं ठाउँ।।

–रा.च.मा. 2/127 दोहा

तुलसी के राम एक ओर "दसरथ अजिरबिहारी" है तो दूसरी ओर निखिल ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं –

हरि ब्यापक सर्वत्र समाना।
प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना।।

–वही 1/185/3

इसलिए उन्होंने उसे "बिस्वरूप" कहा है–

बिस्वरूप रघुबंस मनि करहु बचन बिस्वासु।

–वही 6/14

तुलसीदास उस "निराकार" की अवस्थिति सबके उर में भी मानते हैं–

निर्मम निराकार निरमोहा।
नित्य निरंजन सुख–संदोहा।
प्रकृति पार प्रभु सब उर बासी।
ब्रह्म निरीह बिरज अबिनासी।।

–वही 7/72/3–4

ब्रह्म चाहे निर्गुण हो या सगुण वह सर्वव्यापी है। जब वह सर्वव्यापी है तो आकार की सीमा नहीं रहती और तब उसकी निराकारता स्वतः सिद्ध हो जाती है। आकार उसे एकदेशीय बना देता है पर वह सर्वान्तर्यामी है। यही गीता कहती है–

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति।।

–गीता 13/13

कागभुशुण्डि अपने इसी एकदेशीय प्रभु राम को अनगनित भुवनों में सर्वदेशीय रूप में देखते हैं–

भिन्न–भिन्न मैं देखि सबु अति विचित्र हरि जान।
अगनित भुवन, फिरउँ प्रभु राम न देखउँ आन।।

–रा.च.मा. 7/81 क दोहा.

राम के उदर में संपूर्ण जगत् के और संपूर्ण जगत् में राम के दर्शन द्वारा उनकी सर्वव्यापकता सिद्ध की गई है–

राम उदर देखउँ जग नाना।
देखत बनइ न जाइ बखाना।।
तहँ पुनि देखउँ राम सुजाना।
मायापति कृपाल भगवाना।।

–वही, 7/82/3

राम की सर्वव्यापकता का वह स्थल अत्यंत सुंदर है, जहाँ माता कौशल्या को भगवान राम के उस अद्‌भुत अखंड विश्वरूप का साक्षात्कार होता है जिसके रोम–रोम में एक नहीं सहस्र ब्रह्माण्ड विद्यमान हैं–

देखरावा मातहि निज अद्‌भुत रूप अखंड।
रोम–रोम प्रति लागे कोटि–कोटि ब्रह्माण्ड।।

–रा.च.मा. 1/201 दोहा

इस अद्‌भुत अनुभूति से कौशल्या का तन पुलकित हो जाता है और आनन्दातिरेक में उनके मुख से शब्द तक निस्सृत नहीं हो पाते–

तन पुलकित मुख बचन न आवा।
नयन मूदि चरननि सिर नावा।

–वही, 1/202/3

उत्तरकांड में स्वंय राम सुग्रीव, विभीषण, अंगद तथा जामवंत आदि को अपनी इस सर्वहृदयस्थ रूप का परिचय देते हुए दृढ़ प्रीति करने का संदेश देते हैं–

अब गृह जाहु सखा सब भजेहु मोहि दृढ़ नेम।
सदा सर्बगत सर्ब हित जानि करेहु अति प्रेम।।

–वही, 7/16

अयोध्या लौटकर राम अपने "अमित रूप" में प्रकट होकर सबसे "जथाजोग" मिलकर आनंद प्रदान करते हैं–

अमित रूप प्रगटे तेहि काला।
जथा जोग मिले सबहि कृपाला।।

–रा.च.मा. 7/6/3

यहाँ भी राम की सर्वव्यापकता की प्रबल पुष्टि होती है। तुलसी ने राम को परात्पर ब्रह्म का अवतार माना है। वह सर्वव्यापक हैं, किसी विशिष्ट लोक में उनका निवास नहीं है।

शिव–पार्वती–संवाद में भी राम की इसी व्यापकता के दर्शन होते हैं–

राम ब्रह्म ब्यापक जग जाना।
परमानंद परेस पुराना।

वही, 1/116/4

स्वयं ब्रह्माजी ने उन्हें "सब–घटवासी" और व्यापक कहा है।–

जय–जय अबिनासी सब
घटबासी ब्यापक परमानंदा

–वही 1/186/छंद

"सीकर तें त्रौलोक" कहकर उनकी सर्वव्यापकता की पुष्टि करते हैं –

जो आनंद सिंधु सुखरासी।
सीकर तें त्रैलोक सुपासी।

–वही 1/197/3

तुलसीदास के मतानुसार राम प्रत्येक हृदय में विराजमान हैं–

राम ब्रह्म चिनमय अबिनासी।
सर्व रहित सब उर पुर बासी।

–वही 1/120/3

पूरे ब्रह्माण्ड में उनकी व्याप्ति है–

सोइ रामु ब्यापक ब्रह्म भुवन
निकाय पति माया धनी।

वही 1/51/छंद और भी देखिए
– विनयपत्रिका, 56/3, 53/8

मूलतः ब्रह्म व्यापक है किंतु सूर्यवंश में राम–रूप में उनका अवतरण प्रेम और भक्तिवश है–

ब्यापक ब्रह्म निरंजन निर्गुन बिगत विनोद।
सो अज प्रेम बस कौसल्या कें गोद।

–वही 1/198 दोहा

रीतिकालीन कवि केशव की दृष्टि में सबके घट में अंतर्यामी रूप में विराजने वाली सत्ता ही सर्वत्र व्याप्त है। इसलिए केशव ने उसे सर्वव्यापक कहा है–

बाहर भीतर व्यापक जो है,
एक निरीह निरंजन सोहै।

–विज्ञानगीता, अठारहवां प्रभाव, छंद 18–19

कृष्णभक्त कवियों ने भी अपने पदों में कृष्ण तत्व की व्यापकता को स्वीकार किया है। अष्टछाप के कवि कुंभनदास के कृष्ण अपने को "त्रिभुवनपति" बतलाते हुए गोपियों से अपने घट–घटवासी स्वरूप का स्वयं ही संकेत देते हैं–

तुम कहा जानो बावरी। हम त्रिभुवन पति राइ।
जीव जल–स्थल में बसै। सो घट–घट रहयौ समाइ।

–कुंभनदास, ब्रजभूषण शर्मा, पृ.13

नंददास के अनुसार संपूर्ण प्राणी उसी ईश्वर का विस्तार रूप है। वही जीव–रूपों में और सृष्टि–रूप में समाया हुआ है–

तुम सब भूतनि को बिस्तार,
देह प्रान इन्द्री अहंकार।

–दशमस्कन्ध भाषा, दशम अध्याय,
नंददास शुक्ल, पृ. 241

सब प्राणी ईश्वर से इस प्रकार प्रसूत हैं जैसे अग्नि से स्फुलिंग–

तुम ते हम सब उपजत ऐसै,
अगिनि तें स्फुलिंग गन जैसे।

दशम स्कंध भागवत, द्वितीय अध्याय,
नंददास, शुक्ल पृ. 207

कविवर बिहारी लाल के इष्ट श्रीकृष्ण सभी के हृदय में बसते हैं –बिहारी रत्नाकर, दोहा 428

ऐसे अनेक स्थल कृष्ण–काव्य में है जहाँ वे

निर्गुण–भक्ति से प्रभावित दिखते हैं। सत्यपुरुष को हर घट में देखते हैं –

सत्य पुरूष बैठे घट ही में अभिमानी कौं त्यागैं

–सूरसागर सटीक, प्रथम स्कंध, पद 244

वही अनूप रूप ही ज्योति बनकर प्रकाशित हो रहा है–

रह्यौ घट–घट व्यापि सोई जोति रूप अनूप।

–वही, द्वितीय स्कंध, पद 27

भक्त कृष्णदास ने राम और कृष्ण का भी एकीकरण कर दिया। उनके अनुसार नंदराय के घर में जो स्वरूप विराजमान है वह राम ही है और वह तीनों लोकों में रम रहा है–

राम–राम रमि रह्यौ त्रैलोक

–कृष्णदास–पदसंग्रह, दीनदयालु गुप्त, पद 81

कवि छीतस्वामी को भी सारा जगत् कृष्णमय दिखाई देता है–

आगे कृष्ण, पाछे कृष्ण, इत कृष्ण,
उत कृष्ण जित देखौं तित कृष्ण मई री।

–छीतस्वामी, दीनदयालु गुप्त पदसंग्रह पद 41

रीतिसिद्ध कवि देव पूरे ब्रह्माण्ड में बाहर–भीतर, ऊपर–नीचे उसी परम तत्व को व्याप्त देखते हैं। बाहर भीतर सो अध अरध पूरि रह्यो सु अकास की नाई कहकर उस परमतत्व का साक्षात्कार करते हैं। कविवर बिहारी को भी संपूर्ण जगत में एक ईश्वर का रूप अनन्त रूप से भासित होता दिखाई देता है–

मैं समुझ्यौ निरधार, यह जगु काँचो कांचो सो।
एकै रूप अपार प्रति–बिंबित लखियतु जहौं।।

–बिहारी–रत्नाकर, दोहा 181

सच बात यह है कि परमात्मा का वास किसी स्थान विशेष में न होकर सर्वत्र समान रूप से है। सभी निर्गुण भक्तों ने यह एक मत से स्वीकार किया है कि परब्रह्म कण–कण में प्राणिमात्र में विद्यमान है।

एन.डी.–57, पीतमपुरा, दिल्ली–110034

लेख

tlkd lk ykejHkt ylr kd

kkf fr oky Hk le

अयोध्यापति दशरथ दर्पण में कान के समीप श्वेत केश देख राम राज्याभिषेक की गुरु वशिष्ठ से अनुमति लेकर तैयारी आरम्भ करते हैं। राज्याभिषेक की पूर्व रात्रि को अंतःपुर में अपनी प्रेयसी को यह शुभ समाचार सुनाने की गरज से कैकेयी निवास की ओर गमन करते हैं पर यह क्या रानी कैकेयी तो कोप भवन में है ? समाचार सुन सन्न रह जाते हैं। कोप भवन जाकर रानी को मनाने के प्रयास में रानी को दो पूर्व स्थगित वरदान देने का वचन दे बैठते हैं। और रानी–

"सुनहु प्रानप्रिय भावत जीका, देहु एक वर भरतही टीका।
दूसर वर मांगो कर जोरी, पुरवहु नाथ मनोरथ मोरी।
तापस वेष, विशेष उदासी, चौदह बरस राम वनवासी।।"

ये दो वरदान मांग लेती है, जिनकी प्रतिक्रिया में दशरथ अनेक साम्य वचनों से समझाना चाहते हैं प्रत्युत्तर में कैकेयी कहती हैं–

"जस कोसला मोर भल ताका तस फल उनहि देउं करि साका"

इसका अभिधार्थ है कि कौशल्या ने जैसा मेरा भला (बुरा) किया है बदले में उन्हें उसका फल चखाउंगी। परन्तु इसमें निहितार्थ कुछ और ही है, वह जानने हेतु इसकी पूर्व पीठिका पर दृष्टिपात करना आवश्यक होगा–

मनु शतरूपा, कश्यप अदिति ने महा तप कर के प्रभु से पुत्र प्राप्ति का वर मांगा। मनु कश्यप यहां आकर दशरथ हुए और शतरूपा अदिति कौशल्या रूप में जन्मीं और जगतपिता परमेश्वर ने पुत्र श्रीराम के रूप में अवतार ग्रहण किया। वरदान के अनुसार माता–पिता की पुत्र के प्रति अनन्य भक्ति हुई–

"सुत विषयक तव पद रति होउ, मोहि बड़, मूढ़ कहे किन कोउ।
मनि बिनु फनि जिमि जल बिनु मीना, मम जीवन तुमहि अधीना।"

यह तो दशरथ का मांगा हुआ वरदान था परंतु महारानी शतरूपा कौशल्या को प्रभु ने विशेष वरदान दिया था–

"मातु विवेक अलौकिक तोरे,
कबहु न मिटहि अनुग्रह मोरे।"

विचारणीय तथ्य है कि प्रभु ने जिस अलौकिक विवेक का वरदान दिया था वह क्या था ? उनका तो समस्त ज्ञान–बुद्धि–वैभव–विवेकादि पुत्र जन्म–स्नेह–लालन–पालन, विवाह और राज्यादि समारोह के बीच खोता जा रहा था तो फिर विवेक नाश न होने के वरदान का क्या हुआ ? इस प्रश्न के उत्तर हेतु माता कौशल्या का कैकेयी आदि सोतों एवं भरतादिक अन्य पुत्रों के साथ व्यवहार पर दृष्टिपात करें तो लगता है सचमुच उन्हें अलौकिक विवेक था। नारी सुलभ जो सौतिया डाह होता है वह उन्हें छू भी नहीं गया था और उनके प्रभाव से अन्य रानियों का भी स्पर्श नहीं कर पाया था। पुत्र प्रेम का तो यह हाल है कि लोगों को यह तक पता नहीं है कि कौन किसका पुत्र और कौन किसकी माँ है यद्यपि कौशल्या को चारों पुत्र आंख के तारे हैं परन्तु उनका अगाध स्नेह भरत के प्रति है और उनके प्रभाव से कैकेयी का राम के प्रति इतना स्नेह है कि भरत के प्रति उनके मन में अपनेपन का मोह रंचमात्र भी नहीं है। तभी तो दशरथ को स्वर्गाधिपति सुरेश से प्राप्त रत्न जड़ित अंगूठी जो अपनी प्राण रक्षा के पुरस्कार स्वरूप उन्होंने कैकेयी को दे दी थी वह अद्वितीय अमूल्य रत्न कैकेयी ने अपनी पुत्रवधू माण्डवी को न देकर सीता को दी थी जो सीता ने केवट को उतराई के लिये राम को दी और राम ने हनुमान द्वारा अशोक वाटिका स्थित सीता के पास भेजी।

यदि कैकेयी में भरत के प्रति अपना पुत्र मोह रंच मात्र भी होता तो वह अद्वितीय अंगूठी सीता को न मिलकर माण्डवी को मिली होती। देखें, लक्ष्मण सुमित्रा पुत्र हैं। वनवास की अनुमति मांगने जाते हैं तो वे कहती हैं–

"तात तुम्हार मातु वैदेही
पिता राम सब भांति सनेहीं
जो पितु मातु, कहे वन जाहीं
अवध तुम्हार काज कछुं नाहीं
अवध तहां जहां राम वैदेही"

कौशल्या ने विशाल तपस्या करके राम जैसा अलौकिक पुत्र पाया था। उसी कौशल्या ने उस अलौकिक पुत्र को कैकेयी को गोद में डाल दिया और उसे अलौकिक पुत्र की माता होने का गौरव प्रदान करने वाली कौशल्या ही तो थी। सामान्य नारी कैकेयी के पुत्र को अपना पुत्र बना कर उसे कितना महान बनाया कि *"जग जपु राम राम जपु जैही"*।

क्या कैकेयी कौशल्या के इस अनुपम त्याग–स्नेह–सौहार्द्र को नहीं जानती थी ?जो उससे सौतियाडाह पालती। अवश्य जानती थी कि सामान्य नारी से अलौकिक पुत्र की माता होने का गौरव प्रदान करने वाली कौशल्या ही है। यह पद वे किसी अधिकार या कर्म से नहीं पा सकती थी जो उन्हें मात्र कौशल्या की कृपा से प्राप्त हुआ था। वे उससे भलीभांति अवगत थीं और इस उपकार का बदला चुकाना चाहती थीं। तभी तो वे कहती हैं –

"जस कोसला मोर भल ताका,
तस फल उनही देउं करि साका।"

कौशल्या ने राम की माता प्रतिपादित कर जो श्रेय प्रदान कर मुझे गौरव देकर मेरी भलाई की है मैं उसका प्रतिफल उनके उपकार का प्रत्युपकार अवश्य करूंगी जैसे कौशल्या ने अपनी तपस्या के फल को मेरे अंक में डाल दिया सो मैं भी उनके पुत्र

को मात्र अयोध्या का नहीं अपितु अखिल विश्व का नायक बनाकर ही उन्हें भेंट दूंगी। कौशल्या ने अपने विवेक से तपस्या के प्रतिफल पुत्र को मुझे दिया पर मैं अपना सर्वस्व देकर राम का जीवन संवारूंगी भले ही मुझे अपना यौवन–सौभाग्य–सुख–यश–ममत्व खोना पड़े, वैधव्य अपकीर्ति का सामना करना पड़े मैं अवश्य करूंगी। यह सब करने की परिस्थितियां भी अनुकूल थीं। दशरथ दो वरदान दे ही चुके थे। देवता भी राम वनवास के इच्छुक थे अतः कौशल्या पुत्र भरत को राम का प्रभारी बनाकर अयोध्या का राज्य दिलाया व राम को विश्व–विजेता रावण पर विजय पाने हेतु भेज दिया स्वयं कलंक की कोठरी बनकर, सबसे भरत तक से अपमानित होकर, वैधव्य जीवन व्यतीत करती तपस्यानल में तपती रही। जिस तपस्याग्नि में तपकर भी मनुशतरूपा ने पुत्र प्रेम व मोह को ही पाया था उसी तपस्याग्नि में तप कर कैकेयी ने अपने पुत्र राम भरत दोनों को ऐसे अलौकिक गुणों युक्त कर दिया कि जिसका उदाहरण विश्व इतिहास में मिलना दुर्लभ है। इस तरह कौशल्या का कैकेयी के प्रति त्याग व उत्सर्ग का प्रतिदान कौशल्या को चुका दिया। धन्य है माता कैकेयी जिसने सामाजिक कलंक, दुःख की परवाह न करके ऐसी अद्वितीय आयोजना को साकार किया जो विश्व की किसी भी नारी के लिये असंभव होती। त्याग की मूर्ति बुद्धिमती कैकेयी धन्य है। उन्हें बदनाम करना भी मात्र मूर्खता ही है जिनके बारे में तुलसी का कथन है–

"दोष देहीं जननीहि जड़ तेइ
जिन गुरु साधु सभा नहीं सेई।"

नाथवाड़ा शाजापुर (म.प्र.) 465001

हमारे मंदिर नियमित पूजा–पाठ, आरती, भजन के साथ ही अपने समाज की जागृति एवं उसे संस्कार देने का केन्द्र भी होते हैं। वे स्वावलंबी बन कर इस दिशा में सक्रिय हो, यह प्रयत्न करने की अत्यंत आवश्यकता है।

कविता

! kn kg& nj kcj

Hkk| ukèk f =ki BB |/kk j k

सदा सुहागिनि राम की, सदा राम–संयोग।
राम–प्रेम–माती रहै, कबौं न होय वियोग।।
सदा सुहागिनि राम की, करै राम से प्रीति।
मगन राम–रस में रहै, अवरि न जानै रीति।।
सदा सुहागिनि राम की, करै राम से प्यार।
सदा रिझावै राम को करि सोलह श्रृंगार।।
सदा सुहागिनि राम की, सदा राम–रति लीन।
सदा सुखी सब विधि रहै, ज्यों सागर में मीन।।
सदा सुहागिनि राम की, चित्तवृत्ति निःशंक।
करै सदा रसकेलि संग परी प्रेम–पर्यंक।।
सदा सुहागिनि राम की, पलभर धरै न धीर।
आपनपन भूली रहै, पुलकित रहै शरीर।।
सदा सुहागिनि राम की, रँगी राम के रंग।
संग करै सत् का सदा सोवै नंग–धड़ंग।।
प्रेम सकल सुख सार है, प्रेम स्वयं परमेश,
आनंद का आधार है पुण्य प्रेम "मधुरेश"।।
चाहो सच्चा प्रेम, तो तजो अधम–अभिमान।
परम प्रेम ही है सदा मानव का उत्थान।।
प्रेम स्वयं उपमेय है, प्रेम स्वयं उपमान।
नहीं कभी भी रीझते प्रेम–बिना भगवान।।
प्रेम आत्म–संधान का एकमेव शुभ द्वार।
प्रेम–बिना संभव नहीं मानव का उद्धार।।

साहित्य मण्डप, चन्दलोक कालोनी, शहजादपुर, अकबरपुर, अम्बेडकर नगर (उ.प्र.)

लेख

h toJu Re ;kjv iluUt e

jk ek j k.f rkojh

मृत्यु एक बड़ा रहस्य है। डाक्टरों ने ऐसे लोगों के बयान दर्ज किये हैं जिनकी औपचारिक रूप से मृत्यु हो चुकी थी और वे पुनःजीवित हो गये। उनमें से कइयों ने तेज रोशनी देखे जाने का जिक्र किया ऐसा डाक्टरों का कहना है। कुछ ऐसे लोगों ने शरीर से बाहर के अनुभव का बखान किया। ऐसे भी थे जिनने बाहर से अपने मृत शरीर का दर्शन किया और देखा कि डाक्टर उसे होश में लाने का अथक प्रयत्न कर रहे हैं। क्या मृत व्यक्ति में जीवन का संचार करना संभव है। क्या है जो शरीर से बाहर चला जाता है और फिर वापस आ जाता है। चेतना क्या मस्तिष्क का गुणधर्म है या एक अलग इकाई है। याददाश्त मन में जमा रहती है या मस्तिष्क में। उपर्युक्त कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनके उत्तर हम सब जानना चाहते हैं। उसी तरह से पुनर्जन्म की धारणा भी एक रहस्य ही है। बड़ी संख्या में पुनर्जन्म की घटनाएँ सामने आई हैं और उनकी छानबीन किये जाने की सूचना है। पिछले जन्म की याददाश्त जिन लोगों में पाये जाने की बात का पता लगा तो उनसे साक्षात्कार किये जाने और अन्य कई जानकारियाँ हासिल करने की बात भी समाचार पत्रों में छपती रही हैं।

कई मामलों में पिछले जन्म की याददाश्त का दावा और उससे जुड़ी जानकारियाँ सही पाई गईं। ऐसे व्यावसायिक हैं जो किसी व्यक्ति को सम्मोहित करके ऐसी अवस्था में पहुँचा देते हैं कि उसे पिछले जन्म की बातें याद आने लगती हैं। ऐसी जानकारियों की सच्चाई की छान–बीन आवश्यक है। ऐसी बातों पर योगशास्त्र कुछ रोशनी डाल सकता है। पहले हम याददाश्त की बात ही लें। याददाश्त क्या मस्तिष्क में जमा है ? यदि ऐसा है तो हमें मस्तिष्क की जाँच करनी चाहिये।

शास्त्रों के अनुसार याददाश्त मनोमय कोष में संग्रहीत रहती है जिसे मन या चित्त कह सकते हैं। उसे प्रकट करने के लिये भौतिक मस्तिष्क की आवश्यकता होती है अर्थात् मस्तिष्क एक माध्यम है। उदाहरण के लिये किसी संगणक

(कंप्यूटर) में भौतिक सामग्री होती है। मस्तिष्क की तुलना संगणक से कर सकते हैं। यदि पुर्जे क्षतिग्रस्त हो जाते हैं तो संगणक काम करना बन्द कर देता है। उसे पुनः कार्यक्रमबद्ध किया जा सकता है किन्तु वह सही ढंग से काम नहीं करेगा। वृद्धावस्था में मस्तिष्क की कोशिकाएँ क्षतिग्रस्त हो जाने के कारण याददाश्त प्रभावित हो जाती है। कुछ लोगों की याददाश्त किसी दुर्घटना के कारण चली जाती है। सही इलाज के बाद उनकी याददाश्त वापस आ सकती है। ऐसे भी लोग पाये जाते हैं जो भूतकाल के मनोमयकोष लिये होते हैं और उन्हें पूर्व जन्म की याद रहती है।

एक और उदाहरण कुछ असाधारण बच्चों का है। वे छोटी उम्र में विशिष्ट प्रतिभा का प्रदर्शन करके लोगों को आश्चर्यचकित कर देते हैं। उन्हें पूर्व जन्म की और पूर्व जन्म में अर्जित कुशलता की याद रहती है। सारी जानकारियाँ उनके मनोमयकोष में रहती हैं जो उनके साथ रह जाता है।

हमारे शरीर को उर्जा पंचप्राण से प्राप्त होती है। जब तक धनंजय प्राण रहता है औपचारिक रूप से मृत व्यक्ति को जीवित किया जा सकता है। कुछ योगीगण जैसे योगानन्द पंचप्राण को ठीक से रख सकते थे जिससे भौतिक शरीर त्याग देने के बाद भी उनके शरीर ठीक अवस्था में बने रह सकते थे। कुछ मामलों में कहा जाता है कि एक अन्य जीवात्मा उस शरीर में प्रवेश कर जाती है। लोवसांग राम्पा, एक तिब्बती बौद्ध संत के बारे में कहा जाता है कि उसकी आत्मा एक अंग्रेज के शरीर में प्रवेश कर गई। कुछ ऐसे लोग भी हैं जो अस्तित्व के अलग–अलग आयामों के बीच माध्यम का काम करते हैं। उनके माध्यम से किसी मृत व्यक्ति से संपर्क किया जाना संभव है।

हमारे तीन तरह के शरीर हैंः अन्नमय कोष, भौतिक शरीर, प्राणमय कोष, उर्जा क्षेत्र और मनोमय कोष, मानसिक शरीर। उनके अलावा हमारा एक ताराजटित शरीर होता है और एक नैमित्तिक शरीर। ताराजटित शरीर भौतिक शरीर की प्रतिलिपि के समान है। वह अत्यंत बारीक तंतुओं से बना है। कहा जाता है कि क्षमता संपन्न योगीगण ही ताराजटित शरीर को देख पाते हैं।

कई लोक हैं–

ऐसा भी विश्वास किया जाता है कि अलग–अलग कई लोकों का अस्तित्व है। हमारी पृथ्वी को भूलोक कहा जाता है। फिर पितृलोक, गोलोक और देवलोक वगैरह हैं। विश्वास किया जाता है कि मृत्यु के बाद व्यक्ति इच्छा और अपने कर्मों के अनुसार इन्हीं लोकों में से किसी लोक में चला जाता है। बहुत से लोगों का विश्वास है कि इन लोकों में जाने के बाद जीवात्मा अपने पूर्व रिश्तेदारों को उस लोक में ढूँढने का उपक्रम करती है। उन जीवात्माओं में से कइयों को भूलोक से इतना लगाव रहता है कि वे किसी अन्य लोक में नहीं जा पाती और भूलोक में ही प्रेत के रूप में विचरण करती रहती हैं। मृत्यु, पुनर्जन्म, अन्य लोकों में जीवात्मा का मृत्यु के बाद निवास, मृत व्यक्ति की आत्मा से संपर्क साधना, उनसे माध्यम के उपक्रम से बात करना आदि बातों का आधार प्रचलित मान्यताएँ हैं। वैज्ञानिक छानबीन से सच्चाई का पता लगाना आवश्यक लगता है। ऐसा नहीं है कि सभी धर्मों के मानने वाले उपरोक्त सभी बातों पर विश्वास करते हैं किन्तु उनकी अपनी मान्यताएँ हैं। सारी मान्यताएँ और विश्वास की जड़ें इतनी गहराई लिये होती हैं

कि सामान्य व्यक्ति बाल्यकाल से ही उनके अन्यथा होने की बात नहीं सोच पाता है।

एक दल जिसमें चिकित्सक, मस्तिष्क रोग, विशेषज्ञ, मनोविज्ञानी, वैज्ञानिक और अध्यात्मवादी हों, उपरोक्त सभी पहलुओं की निष्पक्ष रूप से छानबीन करें ताकि सत्य निर्विवाद रूप से सामने आये। इक्कीसवीं सदी में ऐसे उपकरण हैं कि छानबीन और निष्कर्ष की संभावना बलवती हैं। किन्तु छानबीन का स्वरूप कैसा हो इस पर शायद ही यथार्थवादी वैज्ञानिक और अध्यात्मवादी एकमत हों। आत्मा के स्वरूप पर ही मत भिन्नता सामने आयेगी। इसे निराकार माना जाता है। भारतीय दर्शन उसके अस्तित्व को निर्विवाद रूप से स्वीकार करते हैं। उसे द्रव्य (पदार्थ) की संज्ञा दी गई है। मन और चित्त भी संदेह से परे नहीं हैं। यदि आत्मा का अस्तित्व है तो वह क्या सभी प्राणियों में होती है या केवल मनुष्य में। सभी प्राणी चेतन हैं। उनमें गति, सुरक्षा की भावना और भोजन की आवश्यकता समान रूप से विद्यमान है लेकिन बुद्धिमानी का अभाव दिखता है। आत्मा चाहे जितनी बड़ी हो, चींटी में, कीड़े मकोड़ों में, मच्छर में अथवा सूक्ष्म जीवाणुओं में होना संभव ही नहीं है। ये सभी प्राणी भी चेतन तत्व हैं। उनमें गति है सुरक्षा की भावना है और उन्हें जीवित रहने के लिये भोजन की आवश्यकता होती है। इसका एक ही अर्थ हो सकता है बिना आत्मा के प्राणी हो सकते हैं। द्रव्यों में केवल आकाश और समय निराकार हैं। भारतीय दर्शन उन्हें भी द्रव्य (पदार्थ) मानते हैं। महर्षि कणाद के वैशेषिक दर्शन में सात पदार्थ बताये गये हैं जिनमें द्रव्य ही एक ठोस पदार्थ है। द्रव्यों की संख्या नौ दर्शाई गई है (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, काल, दिशा, आत्मा और मन) गीता एक सर्वमान्य धार्मिक ग्रन्थ है। मान्यता है कि वह कृष्ण और अर्जुन के बीच संवाद है। उसमें आत्मा का जो वर्णन है उससे आत्मा का अजर–अमर होने की बात कही गयी है –

नैनम छिंदन्ति शस्त्राणि, नैनम दहति पावकः।
न चैनम् क्लेदयन्त्यापः न शोषगति मारुतः।।

[उसे (आत्मा को) शस्त्र नहीं काट सकते, अग्नि उसे नहीं जला सकती, जल उसे भिगो नही सकता और वायु उसे उड़ाकर नहीं ले जा सकता।]

यही सब बातें वायु पर भी लागू होती हैं। वायु भी निराकार है। दिखाई नहीं पड़ता किन्तु स्पर्श से उसका अस्तित्व प्रमाणित है। तो क्या आत्मा वायु के सदृश है। दर्शनों में चार प्रमाण दर्शाये गये हैं (प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और आप्त वाक्य)। कहा जा सकता है कि आप्त वाक्य से आत्मा प्रमाणित है। यदि मान लिया जाये कि आत्मा केवल मनुष्यों में होती है तो भी कई ज्वलन्त प्रश्न सामने आते हैं जैसेः

(1) देह त्याग के बाद आत्माएँ कहाँ जाती हैं। पितृलोक, गोलोक, देवलोक आदि काल्पनिक हैं।
(2) हजारों वर्ष पहले पृथ्वी की आबादी एक अरब थी जो अब बढ़कर सप्त अरब साठ करोड़ हो गई है। छः अरब साठ करोड़ आत्माएँ कहाँ से आ गईं ?
(3) ब्रह्मांड की बात जाने दीजिये। आकाश गांगा तारामंडल में ही सौ करोड़ से ऊपर तारे हैं। प्रायः सभी में ग्रह प्रणाली है। करोड़ों ग्रहों में मनुष्य या मिलते जुलते बुद्धिमान प्राणी अवश्य होंगे। क्या उन सबमें आत्मा होगी ?
(4) जीवनमुक्त आत्मा को कैसे पता लगता है कि किसी महिला ने गर्भ धारण किया है। वह किस अवस्था में और कहाँ से गर्भ में फिर भ्रूण में प्रवेश

करती है ?

इसी तरह के प्रश्न प्रबुद्धजनों के मन में उठते हैं। अध्यात्मवादी सभी प्रश्नों में कोई न कोई उत्तर अवश्य देते हैं, चाहे उनके उत्तर में विरोधाभास ही क्यों न हो। वायु निराकार है किन्तु उसका आयतन भी है (चाहे लाखों वर्ग किलोमीटर में हो) और वजन भी। किसी आधान (बड़ा डिब्बा) जिसमें हवा भी हो, का वजन करने के बाद हवा निकाल ली जाय और खाली आधान का वजन किया जाये तो वजन पहले से कम होगा। दोनो ंवजनों में अंतर हवा का वजन होगा। आत्मा का भी कोई न कोई आयतन होना चाहिये और वजन भी। एक समाचार प्रकाशित हुआ था कि रूस में एक मरणासन्न व्यक्ति का वजन लिया गया, फिर मृत्यु हो जाने के बाद (बारीकी से) वजन लिया गया तो 21 ग्राम कम निकला। मृत्यु का कारण आत्मा का शरीर से बाहर हो जाना माना गया और निष्कर्ष निकाला गया कि आत्मा का वजन इक्कीस ग्राम होता है। आवश्यक नहीं है कि यह समाचार सही हो।

सभी मान्यताओं और समाचारों को ध्यान में रखकर यह माना जा सकता है कि आत्मा का अस्तित्व संदेह से परे नहीं है।

ए–5, नेहरू नगर, बिलासपुर (छ.ग.)

l fi"rB u dk vkxkeh kd ;Ø

गुरुवार 12 सितम्बर 19	संध्या 7:00 बजे	डॉ. बल्देव प्रसाद मिश्र स्मृति व्याख्यानमाला माननीय श्री रघु ठाकुर का व्याख्यान ' गांधीजी के ग्राम स्वराज से रामराज्य तक'
रविवार 22 सितम्बर 19 से शनिवार 28 सिम्बर 19 तक	दोपहर 2:30 बजे से सायं 5:00 बजे तक	पितृपक्ष में श्रीमद्भागवत कथा परमपूज्य डॉ. रामाधार शर्मा
मंगलवार 8 अक्टूबर 19 से सोमवार 14 अक्टूबर 19 तक	संध्या 7:00 बजे से	स्वामी अनुभवानंद जी के प्रवचन, गीता–व्यवहार
मंगलवार 22 अक्टूबर 19	प्रातः 11:00 बजे से सायं 4:00 बजे तक	बाल्योत्सव
बुधवार 30 अक्टूबर 19	संध्या 7:00 बजे से	दीपावली मिलन समारोह
मंगलवार 3 दिसम्बर 19 से गुरुवार 5 दिसम्बर 19 तक	संध्या 7:00 बजे से	पं. गौरेलाल शुक्ल स्मृति समारोह पू. रामकिंकर जी के प्रिय शिष्य पं. उमाशंकर व्यास के प्रवचन

लेख

fHkv ko n;u lhifk h tko kg ukdj ©L ;

lkM+ ; ujU n ~kej egkr

भारतीय संस्कृति में सभी धर्मशास्त्रकारों ने "अभिवादनशीलता" को महान धर्म और सदाचार का प्रमुख लक्षण बतलाया है। महाराज मनु ने अपनी स्मृति के प्रारंभ में ही अभिवादनशील व्यक्ति को दीर्घायु, सद्विद्या, उत्तम यश और महान बल पराक्रम की सहज ही प्राप्ति बतलायी है। मूलतः महर्षि मार्कण्डेयजी अभिवादनशीलता के सर्वश्रेष्ठ उदाहरण हैं। उनमें विनय, नम्रता, शिष्टाचार, मर्यादा रक्षण, अभिवादनशीलता, श्रेष्ठजनों, वृद्धों तथा गुरुजनों के प्रति आदर–बुद्धि, सेवाभाव आदि सद्गुणों का भण्डार भरा था, एवं नित्य विप्रों के अभिवादन करने से जो उन्हें आशीर्वाद प्राप्त हुआ, उसी से वे कालजयी महात्मा हुए तथा सदा–सदा के लिए अजर–अमर हो गये।

अपने इस धर्माचरण से ऋषि मार्कण्डेयजी ने संसार में यह संदेश दिया है कि "अपने माता–पिता, गुरु तथा श्रेष्ठजन को सदा प्रणाम करना चाहिये और विनीत भाव से सदा उनका अभिवादन करना चाहिये। इससे दीर्घायु प्राप्त होती है और जीवन सफल हो जाता है।" इस बात के प्रमाणीकरण में पुराणों में एक कथा प्रसिद्ध है। ऐसा वर्णन है कि जब मार्कण्डेय पांच वर्ष के थे, एक दिन वे अपने पिता महर्षि मृकण्डुजी की गोद में खेल रहे थे, उसी समय संयोग से एक महाज्ञानी मर्मज्ञ वहाँ आ पहुँचे और उन्होंने उस बालक के विशिष्ट लक्षणों को देखकर महर्षि मृकण्डु से कहा "मुने! आपका यह बालक कोई सामान्य बालक नहीं है। यह दैवीगुणों से सम्पन्न है और इससे संसार का महान कल्याण होने वाला है। इसके शरीर में जो शुभ लक्षण हैं, ऐसे लक्षण किसी में हों तो वह अजर–अमर होता है किन्तु इस बालक में एक विशेष लक्षण है जिससे सूचित होता है कि आज के दिन से छः महीने होते ही वह मृत्यु को प्राप्त होगा। अतः आप आज, अब से ही इसके दीर्घ जीवन हेतु कार्य करें इतना कहकर वे सिद्ध महात्मा चले गये।"

महात्माओं की भविष्यवाणी कभी भी मिथ्या नहीं होती है यह सोचकर महर्षि मृकण्डुजी ने मृत्यु टालने हेतु समय के पूर्व ही बालक का यज्ञोपवीत संस्कार कर

दिया और कहा बेटा! तुम जिस किसी भी ब्राह्मण को देखना तब विनयपूर्वक प्रणाम करना–

यं कंचिद्वीक्षसे पुत्र भ्रममाणं द्विजोत्तमम्।

तस्यावश्यं त्वयां कार्य विनयादभिवादनम्।।

ऐसा निर्देश देकर मृकण्डुजी निश्चिंत हो गये क्योंकि वे ब्राह्मणों के आशीर्वाद की शक्ति एवं महत्ता से भलीभाँति परिचित थे। मार्कण्डेयजी पिता की आज्ञा मानकर अभिवादन–व्रत में लग गये। जो भी श्रेष्ठजन दिखते, मार्कण्डेयजी बड़े ही भक्ति एवं विनयपूर्वक उन्हें प्रणाम करते।

इस प्रकार छः महीने बीतने में केवल 3 दिन शेष रह गये। इसी बीच तीर्थयात्रापरायण सप्तर्षिगण उधर आ निकले, वहीं वटुवेष में मार्कण्डेयजी खड़े थे। उनका दर्शन कर मार्कण्डेयजी को बड़ा आनन्द हुआ। उन्होंने श्रद्धा भक्तिपूर्वक बड़े ही विनीत भाव से बारी–बारी सभी महर्षियों को प्रणाम किया और सबने पृथक–पृथक दीर्घायु होने का आशीर्वाद दिया। महर्षि वसिष्ठजी ने उस बालक की ओर जब ध्यान से देखा तो वे समझ गये और सप्तर्षियों से कहने लगे, अरे! यह महान् आश्चर्य है जो हम लोगों ने इस बालक को "दीर्घायु" होने का आशीर्वाद दे दिया क्योंकि इस बालक की तो केवल 3 दिन की ही आयु शेष रह गई है, अतः अब कोई ऐसा उपाय करना चाहिये जिससे हम लोगों का आशीर्वाद झूठा सिद्ध न हो। हम भी जानते हैं कि विधाता का विधान भी असत्य नहीं हो सकता। अतः इस बालक के चिरंजीवी होने की कोई युक्ति निकालनी चाहिये।

सप्तर्षिगण ने परस्पर विचार कर यह निश्चय किया कि ब्रह्माजी को छोड़कर दूसरा कोई भी इस समस्या को हल नहीं कर सकता। अतः इस बालक को उनके आगे ले जाकर उन्हीं की आज्ञा से इसे चिरंजीवी बनाना चाहिये। ऐसा निर्णय करके तीर्थभ्रमण का कार्य रोककर उस ब्रह्मचारी को साथ ले वे शीघ्र ही ब्रह्मलोक में जा पहुँचे। वहाँ ब्रह्माजी को प्रणाम करके वेदोक्त स्तोत्रों द्वारा उनकी स्तुति करने पश्चात् सब मुनि बैठ गये।

इसके बाद उस बालक ने भी ब्रह्माजी को प्रणाम किया, और ब्रह्माजी ने भी उसे दीर्घायु होने का आशीर्वाद दिया। तत्पश्चात् ब्रह्माजी ने सप्तर्षियों से पूछा– आप लोग कहाँ से और किसलिए इस समय यहाँ आये हो और यह उत्तम व्रत धारण करने वाला बालक कौन है ?सप्तर्षियों ने आने का प्रयोजन और उस बालक के संबंध में सारी घटना बताकर कहा कि प्रभु! आपने भी इस बालक को यशस्वी, विद्वान तथा दीर्घायु होने का आशीर्वाद दिया है। अतः अब आप और हम सब सत्यवादी बने रहें। हमारी बात झूठी न होने पाये, ऐसा कोई उपाय करें।

उनकी बात सुनकर ब्रह्माजी मुस्करा उठे और कहने लगे –मुनिवरों! आप लोग चिन्तित न हों। इस बालक ने अपने विनय और अभिवादन के बल पर काल को भी जीत लिया है। तब ब्रह्माजी ने विचार कर अपनी विशिष्ट शक्ति से मार्कण्डेय जी को अजर–अमर तथा जरामुक्त होने का वर प्रदान किया। ब्रह्माजी ने मार्कण्डेयजी को उनके माता–पिता के आश्रम में भेजने को कहा। सप्तर्षिगण बालक को उसके माता–पिता के आश्रम में छोड़कर तीर्थ यात्रा पर निकल गये। मार्कण्डेयजी ने सारी कथा अपने माता–पिता को बता दी तथा कहा कि अभिवादन, विनय, नम्रता, शिष्टाचार, मर्यादा रक्षण से दीर्घजीवन होने का आशीर्वाद प्राप्त होता है।

सीनि. एमआईजी–103, व्यासनगर, ऋषिनगर विस्तार उज्जैन, (म.प्र.)

लेख

ke uo h to uk d ik; tu

k \b h/+ k[h=

परमात्मा की इस सृष्टि में कोई कार्य निष्प्रयोजन अथवा निरुद्देश्य नहीं है। कार्य के इस प्रयोजन को समझ लेना ही ज्ञान है।

अधिकांश व्यक्ति मानव–जीवन का प्रयोजन खाना, कमाना, जीना तथा मर जाना ही समझते हैं किंतु मात्र इतने प्रयोजन के लिए ही परमात्मा ने इतना बहुमूल्य दुर्लभ तथा सर्वशक्ति–सम्पन्न मानव–जीवन नहीं दिया है। यदि केवल खाना, कमाना और मर जाना मात्र ही मानव–जीवन का प्रयोजन होता तो उसमें और अन्य जीव–जन्तुओं, कीट–पतंगों तथा पशुओं में कोई अन्तर नहीं रह जाता। उसे ज्ञान, गौरव एवं आत्म–अस्तित्व की जिज्ञासा न मिली होती। निश्चय ही मानव–जीवन का कोई महान प्रयोजन है।

इस संबंध में गीता हमारा मार्गदर्शन करती है। गीता के चौथे अध्याय के प्रथम व द्वितीय श्लोक इस प्रकार हैं–

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान् मनवे प्राह मुनरिक्ष्वाकवेऽब्रावीत्।।1।।
एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः।
स कालेनेह महता योगो नष्टः परंतप।।2।।

अर्थ – श्री भगवान् बोले– मैंने इस अविनाशी योग को सूर्य से कहा था। फिर सूर्य ने (अपने पुत्र) वैवस्वत मनु से कहा ओर मनु ने (अपने पुत्र) राजा इक्ष्वाकु से कहा।

हे परंतप! इस तरह परम्परा से प्राप्त इस योग को राजर्षियों ने जाना। परन्तु बहुत समय बीत जाने के कारण वह योग (ज्ञान) इस मनुष्यलोक में लुप्तप्राय हो गया।

ये दोनों श्लोक रहस्यपूर्ण हैं व गहरी समझ–बूझ की अपेक्षा रखते हैं।

भगवान् नित्य हैं और उनका अंश जीवत्मा भी नित्य है तथा भगवान् के साथ जीवन का संबंध सनातन (नित्य) है। अतः भगवत्प्राप्ति के सब मार्ग (योगमार्ग,

ज्ञानमार्ग, भक्ति मार्ग आदि) भी सनातन (नित्य) हैं।

भगवान् "विवस्वते प्रोक्तवान" पद से मनुष्यों को यह बताते हैं कि जैसे उनके निर्देशन अनुसार सूर्य सदा उष्मा एवं प्रकाश देकर पृथ्वी के जीवों का कल्याण करते हैं तथा सदा अपने कर्म में संलग्न रहते हुए भी निर्लिप्त रहते हैं, ऐसे ही मनुष्यों को, हर परिस्थिति के अनुसार अपने कर्तव्य–कर्मों का पालन स्वयं करते रहना चाहिये (गीता 3/19) और दूसरों को भी कर्मयोग की शिक्षा देकर लोक–कल्याण करते रहना चाहिये तथा स्वयं निष्काम व अनासक्त रहना चाहिये।

सूर्य सभी लोकों का राजा (प्रमुख) है तथा सभी ग्रहों पर शासन करता है जो उष्मा और प्रकाश प्रदान करके समस्त लोकों को अपने नियंत्रण में रखता है।

महाभारत में (शांति पर्व 348–51–52) में हमें गीता ज्ञान की प्राचीनता इस प्रकार मिलती है, "त्रेतायुग के प्रारंभ में विवस्वान् ने परमेश्वर संबंधी इस विज्ञान का उपदेश मनु को दिया और मनु ने अपने पुत्र इक्ष्वाकु को दिया। इक्ष्वाकु इस पृथ्वी के शासक थे और रघुकुल के पूर्वज थे, जिसमें भगवान राम ने अवतार लिया।" इससे प्रमाणित होता है कि मानव समाज में महाराज इक्ष्वाकु के काल से ही गीता का यह ज्ञान विद्यमान था।

समस्त लोकों के राजा प्रजा की रक्षा के निमित्त होते हैं अतः शासकों (राजन्यवर्ग) को गीता के इस ज्ञान को (विद्या को) समझना चाहिये जिससे वे प्रजा का कल्याण करते हुए शासन कर सकें एवं प्रजा को कामनाओं रूपी भवबन्धन से बचा सकें। मानव जीवन का उद्देश्य भगवान के साथ अपने शाश्वत संबंध के आध्यात्मिक ज्ञान का विकास है। शासन करने वालों को चाहिए कि शिक्षा, संस्कृति तथा भक्ति द्वारा (नागरिकों) को यह पाठ पढ़ाएँ एवं समझायें।

शासकों का यह कर्तव्य भी होना चाहिये कि इस (विद्या) का प्रचार करते रहें ताकि जनता इस महाविद्या का लाभ उठा सके और मनुष्य–जीवन के अवसर का लाभ उठाते हुए सफल मार्ग का अनुसरण कर सके व कर्मयोग का पालन करने की प्रेरणा पा सके।

कल्याणकारी समाज व राज्य की अवधारणा का मूल गीता के उक्त श्लोक ही हैं।

महर्षि अगस्त्य वैदिक संस्थानम् भोपाल (म.प्र.)

सुंदरकांड का पारायण मंदिरों के द्वारा समाज को जाग्रत और चैतन्य बनाने का श्रेष्ठ उपक्रम है।

कविता

l kik&hm i

प्राण दीपक जल....
वक्त की बाती उमर का तेल
नहीं खेल
ईर्ष्या अन्धड़ अहम् तूफान
कैसी शान
वासना के शलभ करते वार
मत कर प्यार
कसम खा तम जीत कर
आलोक भरने की
कुछ कर गुजरने की...।

l jk &ejk le ek e

रोम रोम में रमा
प्रकृति कृति दोनों का कृतिकार...
वेदासन से उतर ओम यह
लोक भूमि तक आया
रमा हुआ है कण कण में
इसलिए राम कहलाया
हुई मान्यता दृढ़, आता जब
बढ़ता अत्याचार...
प्रातः मिलन, सुना संबोधन
राम राम का स्वर
राम नाम ही सत्य, गूंजता
रहा, मरण अवसर–
दिनचर्या का अंग आज भी
सांसों का आधार...

& -if fxj leguu x#

नर्मदा मदिरम्, गृह निर्माण कालोनी, होशंगाबाद (म.प्र.)

प्रसंगवश

l r â n ; udhu r keku

-i uho u k vkp ;

मानस का बालकाण्ड मंगलकारी है। उसमें चाहे संतों का समागम हो या देवताओं का, ये सभी समष्टि के कल्याणार्थ चिन्तन है। बालकाण्ड मानस महाकाव्य का सर्वप्रथम काण्ड है जिसका आरंभ मंगलाचरण से होता है। कवि ने अपनी उदारता, हृदय की निर्मलता तथा दृष्टिकोण की भव्यता द्वारा चरित्र–निर्माण का आदर्श प्रस्तुत किया है।

श्री नारदजी एक बार दीनबन्धु, कृपालु श्री रघुनाथ से संतों के लक्षण पूछते हैं–

संतन के लच्छन रघुबीरा। कहहु नाथ भव भंजन भीरा।।

प्रभु अपने मुख से संतों के लक्षण बताते हैं– संत हमेशा काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर इन छः विकारों से दूर रहते हैं। संत में केवल प्रभु का बल रहता है। केवल उसका सहारा रहता है। संत पापरहित, कामना रहित, निश्चल (स्थिरबुद्धि), अकिंचन (सर्वत्यागी) बाहर–भीतर से पवित्र, सुख के धाम, असीम ज्ञानवान, इच्छा रहित, सत्यनिष्ठ, कवि, विद्वान होते हैं। (मानस 3/44/4)

भारत की पावन भूमि में संतों, ऋषियों और मनीषियों की महान परम्परा सदैव रही है। इसी शानदार परम्परा की उज्जवल कड़ी में हैं भारतमाता मंदिर, हरिद्वार के प्रतिष्ठकर्त्ता, समन्वय पुरोधा, शान्ति के अग्रदूत, अत्यंत सहिष्णु व संवेदनशील, सदाशय, लोक सम्मोहक, ज्ञान, गरिमामय व्यक्तित्व एवं भारतीय संस्कृति की विजय पताका देश–विदेश में फहराने वाले परम सद् गुरुदेव महामंडलेश्वर संतश्री स्वामी श्री सत्यमित्रानंद गिरि जी महाराज। इनका सूर्यालोकित व्यक्तित्व, वातावरण में दिव्य स्पंदन भर देता था। जिनके उद्बोधक विचारों से जीवन में नए सूर्योदय की कल्पना साकार होती थी। जिनकी ओजस्वी और दिव्यवाणी से प्रेरणादायी विचारपुंज प्रस्फुटित होते थे। जीवन में आह्लाद बरसने लगता था। ऐसे धर्म ध्वजावाहक, राष्ट्रीयता को स्वधर्म के साथ जोड़कर अपने सम्पूर्ण जीवन को विश्व में हिन्दू धर्म के प्रचार–प्रसार तथा मनुष्य मात्र के उत्थान के साथ–साथ भारतमाता की सेवा के लिए समर्पित करने वाले सत्य के उपासक हमारे आराध्य श्री स्वामी श्री सत्यमित्रानंद गिरिजी परमात्मा के सतत उपासक थे, वे कहते थे–

उपासना के क्षणों में जब मैं, परमात्मा के चरणों में बैठता हूँ
तब मेरी प्रार्थना रहती है कि, प्रभु मेरे देश को समृद्ध बनाये।

संत सदा दूसरों को मान देते हैं। अभिमान रहित होते हैं। धैर्यवान, धर्म के ज्ञानी,

आचरणशील होते हैं। संसार के दुःखो से रहित, प्रभु के चरणकमलों को छोड़कर उन्हें अपनी देह की भी चिन्ता नहीं रहती है। अपने गुणों को सुनाना पसंद नहीं करते हैं। न्याय पसंद करते हैं। सभी से प्रेम करते हैं, सरल स्वभाव के होते हैं। सदा जप, तप, संयम, नियम में रहते हैं, गुरु, गोविंद तथा ब्राह्मणों का सम्मान करते हैं, उनमें श्रद्धा, क्षमा, दया के गुण होते हैं। प्रभु के चरणों में निष्कपट, निःस्वार्थ प्रेम होता है। वेद, पुराण का यथार्थ ज्ञान रहता है। सदा प्रभु की लीलाओं को गाते सुनते रहते हैं। संतों का हृदय मक्खन के समान होता है। परम पवित्र संत दूसरों के दुःख से पिघल जाता है–

संत हृदय नवनीत, समाना।
कहा कबिन्ह परि कहै न जाना।।
निज परिताप द्रवइ नवीनता।
पर दुख द्रवहिं संत सुपुनीता।।

(उत्तरकाण्ड / 125 / 4)

वस्तुतः संत वह है जिसका संसार के समस्त भोगों से प्रेम हटकर केवल मात्र भगवान् में ही अटल और अचल प्रेम हो गया हो, और जो भगवान् को ही परम आश्रय, परमगति और परम प्रेमास्पद मानते हैं। उनके गुण, प्रभाव, तत्व और रहस्य को समझकर चलते–फिरते, उठते–बैठते, सोते–जागते और एकान्त में साधन करते, सब समय निरन्तर अविच्छिन्नरूप से उनका चिन्तन करते हुए, उन्हीं की आज्ञानुसार, निष्कामभाव से, उन्हीं की प्रसन्नता के लिये भजन करते रहते हैं। पूज्य गुरुदेव स्वामी सत्यामित्रानंदजी गिरि इसी कोटि के संत थे। उन्हें प्रणाम्।

पाठक लिखते हैं

तुलसी मानस भारती का जुलाई 2019 अंक बहुत–सी उच्च कोटि की रचनाओं सहित प्राप्त हुआ। पहली ही रचना कुमार संभव और मानस में भवानी शंकर आख्यान अति ज्ञानवर्धक है। और सुधी लेखक ने जो निष्कर्ष निकाला है कि एक महाकवि स्वर्ग की विभूति को धरती पर खींच लाता है तो दूसरा धरती की विभूति को स्वर्ग पर बिठा देता है, तथा शिव–विवाह के प्रसंग का चित्रण पाठकों को शिव भक्ति में विभोर करेन वाला है। आचार्य डॉ. रामेश्वर प्रसाद गुप्त का लेख आज की परिस्थितियों के संदर्भ में जब सामाजिक समरसता की अति आवश्यकता है, बहुत प्रासंगिक है।

तुलसी के काव्य में संगीत रचना बड़ी भावोत्पादक भी है और अति ज्ञानवर्धक भी। संगीत के रागों की बन्दिश से पदों का अति भावपूर्ण विश्लेषण करके पाठक के नीरस मन में भी श्रद्धा को जागृत कर दिया है। वस्तुतः तुलसी के मानस की चौपाईयां सभी गेय है और उनको अनेक लोक धुनों में गाया जाता है। तुलसी धन्य है और धन्य है हमारे सुधी लेखक की लेखिनी, जिन्होंने सारे लेख को ही संगीतमय बनाकर हृदस के तारों को झंकार दिया है।

समीक्षा

!k; kdL ko xr

k\b M- k[h

पुस्तक का नाम	: सूर्या
लेखक	: प्रभु दयाल मिश्र
प्रकाशक	: इन्द्रप्रस्थ, नई दिल्ली
मूल्य	: 395 रुपये

सूर्या की कथा बहुत गहरी समझ की अपेक्षा करती है। सूर्य के आगमन के पूर्व सूर्या का क्षितिज पर आगमन बहुत सुहावना व प्रकृति की सुन्दर छटा बिखेरता है। इसकी मानवीय रूप से व्याख्या बड़ी कठिन है जिसे श्री मिश्र की क्षमता व ज्ञान ने सम्भव बनाया है। सूर्या के कथन में उल्लेख है कि सूर्या को सोम ने सबसे पहले प्राप्त किया। इसके अनन्तर सूर्या गन्धर्व को प्राप्त हुई। उसका तीसरा पति अग्नि हुआ। मनुष्य रूप में स्तवन करने वाला ऋषि उसका चौथा पति है।

वह कहती है कि इस कथानक में जितने पात्र उसने समेटे हैं वे एक गहरे अर्थ में मेरे ही रूप–प्रतिरूप हैं। अपने आपको इन नाना रूपों में प्रस्तुत कर मैं (सूर्या) वास्तव में एक ही सत्य का निरूपण करने आई थी और वह है विवाह–पद्धति के समाजीकरण के आदर्श की व्याख्या।

लोपामुद्रा व ऋषि अगस्त्य की दूसरी आत्मकथा भी कम रोचक नहीं है। ऋषि अगस्त्य से विवाह उपरांत लोपामुद्रा की इच्छा व उसे प्रसन्न करने के लिये अगस्त्य धन जुटाने का जो श्रम करते हैं वह कहाँ तक सही ठहराया जा सकता है, यह प्रश्न लोपामुद्रा के साथ आज का भी एक महत्तर प्रश्न है। इस कथा का वर्णन विचार के लिए बहुत सामग्री प्रदान करता है।

देवता इन्द्र की पत्नी शची के आत्म कथन से यह स्पष्ट होता है कि उसके सामने वे समस्याएँ नहीं थीं जो ऋषिका लोपामुद्रा व अहिल्या के सामने आई थीं। शची स्वयं स्वीकार करती है कि मैं उग्र विवाचनी मूर्धा हूँ मैं ज्ञान, बल और क्रिया तीनों क्षेत्रों में सर्वोच्च स्थान पर स्थित हूँ। अर्थात् मैं क्रियाशक्ति ही हूँ।

चौथे क्रम पर महर्षि अगस्त्य के आत्म कथन को लोपामुद्रा के संबंधों के क्रम में वर्णित किया गया है। इसमें महर्षि अगस्त्य की दक्षिण भारत की धर्म–विस्तार हेतु की यात्राओं का वर्णन नहीं है। इसका कारण यही स्पष्ट होता है कि यह उपन्यास स्त्री–पुरूष संबंधों की परतों को खोलने को ही विचार में रखकर लिखा गया है। ऐसे में विवाह व स्त्री–पुरुष के पारस्परिक संबंधों को छोड़कर अन्य पहलुओं पर विचार नहीं किया गया है।

पाँचवें क्रम पर श्रद्धा अपना कथन निबन्धात्मक शैली में प्रस्तुत करते हुए मनु के साथ सम्पर्क में आने की कथा कहते हुए स्पष्ट करती है कि हम एक दूसरे के पूरक कैसे बने व कैसे एक–दूसरे के लिए ही संप्रगट व विधि विनिर्मित हुए। श्रद्धा का यह स्पष्ट कथन है कि मनु के साथ उसका आरम्भ प्रत्येक स्त्री–पुरूष की कहानी है। जिसमें आकर्षण, प्रेम, उल्लास, पीड़ा, परपीड़न, क्रीड़ा, प्रतिस्पर्धा, अवसाद और उत्कर्ष के चिंतन आयाम सम्मिलित हैं। यह कथा मनुस्मृति की अन्य व्यवस्थाओं के साथ आगे बढ़ती हुई अन्त में श्रद्धा व मनु के वन प्रस्थान को प्रकट करते हुए समाप्त होती है। यह पुस्तक की सबसे लम्बी कथा है जो पाठक के धैर्य की अच्छी परीक्षा लेती है।

सातवें क्रम पर अहल्या की आत्मकथा इस पुस्तक की श्रेष्ठ रचनाओं में से एक है। अहल्या वय प्राप्त कर विवाह व तत्पश्चात् के जीवन संबंधी जो प्रश्न उठाती है, वे आज भी शाश्वत हैं। महर्षि गौतम, ब्रह्मा, अहल्या व देवता इन्द्र के बीच उठने वाले इन शाश्वत् प्रश्नों के उत्तर पिछले पाँच हजार वर्ष के चिन्तन और विकास के बावजूद अनउत्तरित हैं। शब्द, भाव और शब्दों की गहराई के स्तर में यह कथा बेजोड़ हैं। यह कथा पढ़कर अनउत्तरित प्रश्नों को समझने के पश्चात् ही पाठक की संतुष्टि होती है।

कथाओं को बड़े सुन्दर व रोचक ढंग से प्रस्तुत करने में मिश्रजी का बौद्धिक श्रम स्तुत्य है, इसके लिये वे बधाई के पात्र हैं। यह पुस्तक पढ़ने व संग्रह योग्य है।

कार्यकारणी सदस्य तुलसीमानस प्रतिष्ठान एवं
महर्षि अगस्त्य वैदिक संस्थानम्, भोपाल (म.प्र.)

सुंदरकांड पाठ को प्रत्येक मंदिर क्षेत्र में समाज–जागरण और समाज–सेवा का जाग्रत केन्द्र बनाएँ।

प्रतिष्ठान समाचार

r hyl tjhr kekj g EiUu

e[;dDrk&k);hnhn ekfn hdujk fe djd

io pfi nku d11 vk r l17 vk r r d

e[;fvfrfF &ku hi hlk'kek ehf fok kjvf Kk h;k tu o ,o tu li]d-e-ikk lu

Elkfe uf dk} u&kM ln jk ek'kek k vk p;nkx jpk k' D]ykM kl tlxkr

प्रतिवर्षानुसार इस वर्ष भी तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश के प्रतिष्ठा आयोजन तुलसी जयंती समारोह दिनांक 11 अगस्त से 17 अगस्त 2019 तक प्रायोजित हुआ। व्यास पीठ पर थीं पं.रामकिंकर उपाध्याय की सुयोग्य शिष्या एवं मानस पुत्री दीदी मंदाकिनी रामकिंकर। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री पी.सी. शर्मा मंत्री विधि और विधायी, धर्मस्व एवं जनसंपर्क द्वारा पं. गोस्वामी तुलसीदास एवं पं. रामकिंकर उपाध्याय के चित्रों पर माल्यार्पण एवं दीप प्रज्जवलन द्वारा की गई।

इस अवसर पर सर्वप्रथम प्रतिष्ठान के कार्याध्यक्ष श्री रमाकांत दुबे ने सभी का स्वागत करते हुए कहा कि आप सभी के सहयोग से प्रतिष्ठान का जो स्वप्न साकार हुआ है उसमें अनेक ऐसे महानुभवों का योगदान है जिन्होंने इस भवन की आधारशिला रखी थी, जिनकी कालजयी कवि तुलसी दास जी के प्रति अगाध श्रद्धा थी तथा जो चाहते थे कि मानस की यह अध्यात्य सरिता सतत् यहां भी प्रवाहित होती रहे। ऐसे महाकवि की जयंती पर परमपूज्य युग तुलसी पं. रामकिंकर उपाध्याय की सुयोग्य शिष्या सुश्री दीदी मंदाकिनी रामकिंकर मानस की सहज एवं सुंदर व्याख्या हेतु यहाँ उपस्थित है। प्रतिष्ठान आपके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता है।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि माननीय मंत्री महोदय ने अपने उद्बोधन में कहा कि तुलसीमानस प्रतिष्ठान विगत वर्षा से निरंतर धार्मिक साहित्यिक, सांस्कृतिक आयोजन करता आ रहा है। ये आयोजन प्राचीन सनातन परम्पराओं से अनुप्रांणित होते हैं। इसके लिये प्रतिष्ठान के कार्याध्यक्ष एवं उनके सहयोगी बधाई के पात्र है। आपने दीदी मंदाकिनी की सराहना करते हुये कहा कि आप युग तुलसी पद्मभूषण पूज्य रामकिंकर जी की सुयोग्य शिष्या हैं जो उसी शैली में

रामकथा सुनाकर हम सभी को धन्य कर रही है।

स्वागत सम्मान कार्यक्रम के पश्चात सुश्री दीदी मंदाकिनी रामकिंकर ने अपने विषय 'आत्म प्रबंधन' पर कहा कि हमारे धर्मग्रंथों में, त्रेता में भगवान श्रीराम और द्वापर में भगवान श्री कृष्ण के दिव्य अवतारों की लीलाओं का वर्णन किया गया है। एक ही ईश्वर ने दो रूपों में अवतरित होकर हमें जीवन की विभिन्न स्थितियों में कैसे समन्वय कर अनुकूलताएँ प्राप्त की जायें यहीं शिक्षा दी है। इनकी लीलाओं में जो आत्म प्रबंधन के सत्र मिलते हैं उन्हें आत्मसात् करने की आवश्यकता है। आपने कहा कि श्रीमद् भागवत और रामायण तो ऐसे महान ग्रंथ हैं जो जीवन के साथ–साथ मरण को भी सुधारने की कला सिखाते हैं। यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि अगर हम जीने की आकांक्षा रखते हैं लेकिन मृत्यु से भयभीत हैं तो हम जीवन का आनंद नहीं ले पायेंगे। जबकि प्रत्येक व्यक्ति की मृत्यु तो शाश्वत सत्य है। महाराज परीक्षित को वेद व्यास जी यहीं शिक्षा देते हैं। संत गोस्वामी तुलसी दास जी का भी कथन है कि जन्म मृत्यु के चक्रव्यूह से बाहर निकलने का एक ही मार्ग है प्रभु की शरणागति। ऋषि मुनि जन्म जन्मातर तक भगवान का स्मरण करते रहते हैं ताकि अंत समय में भी भगवाल की स्मृति बनी रहे। आपने कहा कि मनुष्य जीवन की सफलता पाने के लिए जब तक जीवन में बहिरंग प्रबंधन के साथ आत्म प्रबंधन नहीं होगा तब तक वह सफलता पूर्ण और स्थायी नहीं हो सकती है। जिसने अपने जीवन में यह कला सीख ली वही जीवन संग्राम में विजयी हो सकता है। आपने श्रीराम रावण युद्ध में आये धर्मरथ का वर्णन करते हुये कहा कि उसमें संकेत दिया गया है कि बाह्य शत्रुओं के साथ आंतरिक शत्रुओं मोह, क्रोध लोभमद् ईर्ष्या, अहंकार आदि पर विजय पाना सबसे कठिन है और जो इन पर विजय प्राप्त कर लेता है वही विजयी माना जाता है। आपने श्रीमद्भागवत से उदाहरण देते हुए कहा कि अच्छे और बुरे का ज्ञान हमें शास्त्र सिखाते हैं।

बुरा व्यक्ति जब हमसे अच्छा व्यवहार करे तो हमें उससे सावधान रहने की आवश्यकता है। श्रीरामचरित मानस में तो तुलसी दास जी यही कहते हैं कि

नमन नीच की अति दुखदाई
जिमि धनु अंकुस उरग बिलाई

अर्थात् जैसे अंकुश धनुष सर्प और बिल्ली झुककर ही तो अपना प्रहार करते हैं तो क्या हम इसे उनकी नम्रता माने। इसी संदर्भ में आपने वासुदेव–देवकी प्रसंग का उदाहरण देते हुए कहा कि दोनों विवाह के समय आकाशवाणी होने के पूर्व भाई कंस के व्यवहार से ये समझ रहे थे कंस उनके प्रति बहुत विनम्र है और चाहता भी है। पर जब उसने सुना कि इनसे उत्पन्न होने वाला आठवाँ पुत्र उसका काल होगा, तो वही कंस देवकी वासुदेव का वध करने पर आमादा हो गया हमारी बुद्धि और विवेक भी तो इसी प्रकार से भ्रमित हो जाते हैं। इस प्रसंग की आध्यात्मिक व्याख्या करते हुए कहा कि देवकी बुद्धि की और वासुदेव विवेक के प्रतीक हैं, जिन्हें देहाभिमानी कंस कारागार में डाल देता है तथा जिनके छः पुत्रों के जन्म के तत्काल बाद वध भी कर देता है। लेकिन जब आठवे पुत्र के रूप में भगवान श्रीकृष्ण का अवतरण होता है तो न केवल वे देवकी वासुदेव को कारागार से मुक्त कर देते हैं बल्कि उनके मृत छः पुत्रों को भी जीवित कर देते

हैं। तात्पर्य है कि छः पुत्र साधक के छः गुण हैं जिनकी रक्षा भगवान की कृपा के बिना संभव ही नहीं है। अतः व्यक्ति को चाहिए कि जीवन की विषम स्थितियों में भी भगवान की भक्ति का आश्रय न छोड़े। इसलिए धर्म की भी आवश्यकता है। धर्म का उद्देश्य व्यक्ति को ईश्वर की प्राप्ति कराना है। धर्म का विश्लेषण करते हुए मर्मज्ञ वक्ता ने कहा कि धर्म का विभाजन दो रूपों में किया गया है। पहला लौकिक धर्म दूसरा भागवत धर्म – लौकिक धर्म के पालन से समाज में यश, प्रशंसा और कीर्ति मिलती है पर ईश्वर प्राप्ति के लिए तो भागवत धर्म का पालन करना आवश्यक है। आपने इस संदर्भ में श्रीभरतचरित का उल्लेख करते हुए कहा कि गुरु वशिष्ठ ने धर्म पालन के नाम पर अयोध्या का समृद्ध राज्य पद स्वीकराने की आज्ञा दी। पर श्री भरत ने इसे स्वीकार नहीं किया। ऐसा करके श्री भरत ने लौकिक और भागवत धर्म के बीच एक नया धर्म सार प्रस्तुत किया। अतः आवश्यकता है कि हम धर्म के सारतत्व को हृदयंगम करें तभी वह धर्म हमारे मोक्ष और कल्याण का कारक बनेगा। आपने कहा कि शास्त्रों में निहित यही संदेश हमें आत्म प्रबंधन के सूत्र देते हैं। जिनको अपनाकर हम सुखी शांत, समृद्ध जीवन जी सकते हैं।

समापन दिवस पर तुलसी मानस भारती के प्रतिष्ठित लेखकों डॉ. दादूराम शर्मा को श्री त्रिभुवन याद स्मृति पुरस्कार, आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल को श्रीमती सुखरानी देवी पुरस्कार एवं श्रीमती सरोज गुप्ता को श्रीमती रमा अवस्थी महिला लेखिका पुरस्कार प्रदान किया गया। इस अवसर पर तुलसी मानस प्रतिष्ठान के कार्याध्यक्ष श्री रमाकांत दुबे, संयोजक श्री रघुनंदन शर्मा, सचिव श्री एन.एल. खंडेलवाल, श्री राजेन्द्र शर्मा, श्री पी.डी. मिश्रा, श्री कैलाश जोशी एवं श्री कमलेश जैमिनी तथा समारोह के मुख्य अतिथि श्री प्रेम भारती जी भी उपस्थित थे। उपस्थित जनों द्वारा तीनों लेखकों का शाल श्रीफल एवं पुरस्कार राशि से सम्मानित किया। तीनों सम्मानित लेखकों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर संस्था के विद्वान श्री प्रभुदयाल मिश्र ले कहा कि साहित्यिक, आध्यात्मिक क्षेत्र में लेखन से समाज को नई दिशा मिलती है। तुलसीमानस प्रतिष्ठान से प्रकाशित पत्रिका तुलसी मानस भारती का भी यही उद्देश्य है कि साहित्य और धर्म संस्कृति के क्षेत्र में साधनारत् हस्ताक्षरों का सम्मान हो इसी संदर्भ में डॉ. दादूराम शर्मा, आचार्य श्री दुर्गाचरण शुल्क एवं डॉ. सरोज गुप्ता को सम्मानित कर हमें गर्व है। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में प्रख्यात लेखक एवं साहित्यकार डॉ. प्रेम भारती ने अपने उद्बोधन में कहा कि साहित्य और धर्म के क्षेत्र में समन्वय कर तुलसी मानस प्रतिष्ठान अपने राष्ट्रधर्म का पालन कर रहा है। आज मंच पर जहां एक ओर मानस विदुषी और पद्मभूषण युग तुलसी की शिष्या सुश्री मंदाकिनी रामकिंकर विराजमान हैं तो दूसरी ओर साहित्यकार अपनी गरिमामयी उपस्थिति से हमें धन्य कर रहे हैं। आपने 15 अगस्त राष्ट्रीय पर्व और रक्षाबंधन को एक दिन मनाने के सुअवसर पर कहा कि यह अद्भुत संयोग है कि राष्ट्र और संस्कृति को हम एक समझें और दोनों के संवर्धन का प्रयास करें। आपने प्रतिष्ठान तथा मंच पर उपस्थित सभी अतिथियों की सराहना की। कार्यक्रम के समापन अवसर पर महर्षि अगस्त संस्थानम् के अध्यक्ष एवं संस्था के सदस्य श्री पी.डी. मिश्रा ने कहा कि धर्म

मानव की आधारशिला है। भगवान स्वयं धर्म की हानि होने पर अवतरित होते हैं। आत्मप्रबंधन के संबंध में आपने कहा कि पूज्य दीदी मंदाकिनी रामकिंकर ने इन सप्त दिवसों में सद्‌गुणों से मानव मात्र को व्यावहारिक और पारमार्थिक लाभ प्राप्त कराने के सूत्र दिये हैं। वे हम सब के लिए अति हितकारी हैं। प्रतिष्ठान के प्रति उनकी भावना का हम सम्मान करते हैं। आपने इस अवसर पर तीनों विद्‌वानों के व्यक्तित्व और कृतित्व की सराहना करते हुए कहा कि तुलसी साहित्य पर वे सतत् लिख रहे हैं और उनका सहयोग हमें सतत् मिलता रहता है। सप्त दिवसों में समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में सर्व श्री माननीय मंत्री पी.सी. शर्मा, आई. डी. खत्री, रघुनंदन शर्मा, ओमप्रकाश शास्त्री, वैभव भटेले और प्रेम भारती जी के प्रति भी आभार प्रकट किया। प्रतिष्ठान के सभी समारोह में सहयोग देने वाले सुधी श्रोताओं, सुविधा समूह के श्री शैलेन्द्र निगम, महेन्द्र निगम, दूरदर्शन, आकाशवाणी, सभी दैनिक समाचार पत्रों एवं श्री प्रमोद नेमा के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की । सप्त दिवसीय कार्यक्रम के कुशल संचालन के लिए श्री कमलेश जैमिनी के प्रति भी आभार प्रकट किया।

देवेन्द्र रावत

ke u Hkk o u eg~j k;h yhr tee lo

महिला मानस मंच द्वारा हरियाली तीज महोत्सव का पावन पर्व बड़े उल्लास एवं सुगठित तरीके से शनिवार 3 अगस्त 2019 को दोपहर 2 बजे मानस भवन श्यामला हिल्स भोपाल में सपन्न हुआ। यह त्यौहार हरियाली का प्रतीक है जो हमें खुशहाली से सराबोर कर देता है। भगवान महादेव और माता पार्वती के शुभ मिलन का पर्व है हरियाली तीज। सावन का महीना अपने साथ कई त्यौहार भी लेकर आता है। सुहागनों के बीच हरियाली तीज का अपना विशेष महत्व है। सभी की उपस्थिति से कार्यक्रम में चार चांद लग गये।

कार्यक्रम की मुख्यअतिथि विधायक श्रीमती कृष्णा गौर द्वारा दीप प्रज्जलन एवं राधा वल्लभ मंडली द्वारा सरस्वती वंदना प्रस्तुत कर कार्यक्रम प्रारंभ हुआ। इसके पश्चात् श्रीमती सुशीला शुक्ला ने हरियाली तीज क्यों मनायी जाती है पर प्रकाश डाला।

मुख्यअतिथि उद्‌बोधन में श्रीमती कृष्णा गौर ने महिलाओं द्वारा आयोजित तीज महोत्सव की सराहना करते हुए कहा कि इस तरह के आयोजन करते रहना चाहिये। उपस्थित सभी मंडलियों की सराहना करते हुए बधाई दी।

कार्यक्रम को सफल बनाने महिला मानस मंच की अध्यक्ष श्रीमती रजनी यादव का मार्गदर्शन, उपाध्यक्ष श्रीमती सुशीला शुक्ला, सचिव श्रीमती आरती सिंह चौहान का सहयोग सराहनीय रहा। श्रीमती जानकी शुक्ला ने कुशल संचालन किया। अंत में श्रीमती आरती सिंह चौहान ने मुख्य अतिथि, भजन मंडलियों एवं उपस्थित श्रोताओं का धन्यवाद ज्ञापन किया।

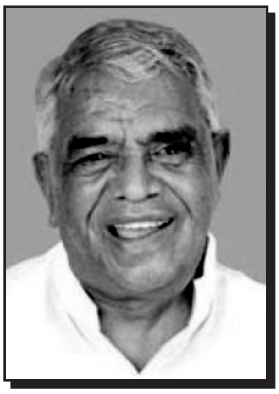

Jk)katfy Jh ckcwyky xkSj

21 अगस्त 2019 एक ऐसे अशुभ दिन के रूप में याद किया जायेगा जिस दिन मध्यप्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री तथा दस बार चुनाव जीतकर अपने क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने वाले विधायक श्री बाबूलाल गौर हमारे बीच नहीं रहे। उन्होंने भोपाल के एक निजी अस्पताल में प्रातः 6:52 बजे 89 वर्ष की आयु में अपनी अंतिम सांस ली।

उनका जीवन एक खुली किताब की तरह था। वर्ष 1946 में वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से जुड़े, 1956 में भारतीय जनसंघ के सचिव बने, 1074 में गोवा मुक्ति आंदोलन में शामिल हुए और आपातकाल में 10 माह जेल में रहे। 1974 में भोपाल दक्षिण से उपचुनाव में विधायक बने। 1977 से 1913 तक लगातार गोविंदपुरा विधानसभा क्षेत्र का विधायक के रूप में प्रतिनिधित्व करते रह कर मंत्री पद जिम्मेदारी का निर्वाह किया और 23 अगस्त 2004 से 29 नवम्बर 2005 तक प्रदेश के मुख्यमंत्री कह जिम्मेदारी भी निभाई। इस प्रकार उनकी राजनीतिक यात्रा शून्य से शिखर तक रही।

श्री गौर तुलसी मानस प्रतिष्ठान से प्रारंभ से लेकर जीवन पर्यन्त जुड़े रहे। मानस भवन की प्रत्येक गतिविधि में उनकी उपस्थिति प्रेरणादायक और उत्साहवर्धक होती थी। वे एक प्रकार से प्रतिष्ठान के संबल थे।

उनके निधन से प्रतिष्ठान अपने आपको हतप्रभ अनुभव करता है और ईश्वर से प्रार्थना करता है कि वे उन्हें सद्गति दे और अपनी शरण में ले।

उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि।

तुलसी जयंती समारोह 2019

तुलसी जयंती के अवसर पर परमपूज्य दीदी मंदाकिनी श्री रामकिंकर प्रवचन करते हुए

तुलसी जयंती के अवसर पर माननीय श्रोतागण - सर्वश्री जयनारायण गुप्ता, ओमप्रकाश शास्त्री, राजेन्द्र शर्मा, मान. मंत्री श्री पी.सी. शर्मा, पुखराज मारू, रघुनंदन शर्मा

श्रोतागण - श्रीमती सुशीला शुक्ला, श्रीमती एवं श्री राजेन्द्र शर्मा, श्री रघुनंदन शर्मा, श्री कमलेश जैमिनी

प्रबुद्ध श्रोतागण

परमपूज्य दीदी मंदाकिनी जी के साथ प्रबंधकारिणी सदस्यगण

नियमित श्रोतागण - श्री जयनारायण गुप्ता, श्री रघुवंशी, गौरीश शर्मा, श्री रघुनंदन शर्मा

स्वामी-तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश, प्रकाशक श्री रमाकांत दुबे और मुद्रक इति जिन, कृषिबोध प्रकाशन, 18-सी, नारायण नगर, होशंगाबाद रोड़, भोपाल मो. 8878112343 से मुद्रित और तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश, मानस भवन, भोपाल से प्रकाशित। प्रधान संपादक : एल.एल. खण्डेलवाल